



प्रबंध संपादक **अनूप भार्गव** 

संपादक **डॉ. जगदीश व्योम** 

कला संपादक विजेंद्र एस. विज

संपादन सलाहकार **डॉ॰ हरीश नवल** 

भारतीय कौंसलावास, न्यूयॉर्क की हिंदी पत्रिका

#### अनन्य

#### मासिक पत्रिका

दिसंबर 2022 - जनवरी 2023 (संयुक्तांक)

भारतीय कौंसलावास, न्यूयॉर्क की हिंदी पत्रिका

### प्रबंध संपादक अनुप भार्गव

### संपादक

डा॰ जगदीश व्योम

### कला संपादक

विजेन्द्र एस. विज

### संपादन सलाहकार

डॉ॰ हरीश नवल

### तकनीकी सलाहकार

बालेन्दु शर्मा दाधीच

### संपादन सहयोग

स्वरांगी साने / आभा खरे

#### व्यवस्था

अमित खरे / गीता घिलोरिया

### सर्वाधिकार सुरक्षित

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री के अन्यत्र उपयोग हेतु लेखक / प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित सामग्री हेतु सम्बंधित लेखक पूरी तरह से उत्तरदायी होंगे।

### संपर्क

रचनाकार अपनी रचनाएँ अनन्य में प्रकाशनार्थ यहाँ भेजे : sampadak.ananya@gmail.com पाठक अपनी प्रतिक्रियाएँ और सुझाव यहाँ भेजें pratikriya.ananya@gmail.com



चित्रकार : जोगेन चौधरी Jogen Chowdhury Three women, 1992 56 x 71 cm Ink & Pastel



आइकॉन पर क्लिक करने से आप ऑडिओ रिकॉर्डिंग सुन सकते हैं



आइकॉन पर क्लिक करने से आप विडियो रिकॉर्डिंग सुन सकते हैं

## अनुक्रम

	પૃષ્ઠ સંख્યા
<mark>संपादकीय</mark> डॅा॰ जगदीश व्योम	06
गीत/नवगीत: डॉ. जगदीश व्योम' डॉ. विनोद निगम / चार नवगीत	07 09
विशेष लेख : कमलेश भट्ट कमल 'हाइकु दिवस' 4 दिसंबर हाइकु कविता की एक सदी	12
कहानी : डॉ. इला प्रसाद / बैसाखियाँ	18
गीत/नवगीत : अनामिका सिंह दो नवगीत	26
कविता : ऋचा जैन / दो कविताएँ	28
कहानी : डा. किंशुक गुप्ता हमारे हिस्से के आधे-अधूरे चाँद	30
लघुकथा / त्रिलोक सिंह ठकुरेला पिताजी / मौन - दो लघुकथाएँ	38 39
<mark>ग़ज़ल : जय चक्रवर्ती</mark> ग़ज़ल	40
<mark>कविता : मुकेश कुमार सिन्हा</mark> कविता	42
कला : अभिषेक कश्यप जोगेन चौधरी की कला न्यूनतम में अधिकतम	44
चित्र / चित्रकार : जया पाठक श्रीनिवासन सोलमेट	पृष्ठ भाग

### दो शब्द...



'अनन्य' पत्रिका अपने छह अंक प्रकाशित करने के उपरांत नये साल 2023 में प्रवेश कर रही है। अनन्य के इन छह अंकों को वैश्विक स्तर पर पाठकों का बड़ी मात्रा में स्नेह मिला है। दिसम्बर 2022 का अंक और जनवरी 2023 का अंक संयुक्तांक के रूप में प्रकाशित हो रहा है। अनन्य के आगामी अंक सम्बंधित

माह की पहली तारीख को प्रकाशित हो सकें, यह हमारा प्रयास रहेगा।

अनन्य के अंक अब ग्यारह देशों से प्रकाशित हो रहे हैं; इसके लिए भारतीय कौंसलावास न्यूयार्क के प्रधान कौंसल और कौंसलावास के सभी सहयोगी अधिकारी एवं अनूप भार्गव जी का विशेष आभार कि स्वयंसेवी भाव से हिंदी की यह वैश्विक पत्रिका आज विश्व भर में चर्चित हो रही है और सराही जा रही है। संभव है कि अन्य देशों के भारतीय दूतावास भी इससे प्रेरित होकर इस अभियान को अपने-अपने स्तर से विस्तार देने का मन बनाएँ।

अनन्य और अनन्य की वे सभी सहयोगी पत्रिकाएँ जो ग्यारह देशों से प्रकाशित हो रही हैं; इनका लक्ष्य है भारतीय भाषाओं, भारतीय संस्कृति और सम्बंधित देश की भाषा व संस्कृति के साथ एक स्वस्थ सेतु का निर्माण करना। सम्बंधित देश के प्रवासी भारतीय, भारत से दूर रहकर भी भाषा और संस्कृति के स्तर पर अपने को निरंतर अद्यतन करते रह सकें।

अनन्य के आगामी अंकों के लिए सम्बंधित देशों में रह रहे प्रवासी भारतीय अपने अनुभव, संघर्ष, ऐतिहासिक स्थल, प्राकृतिक धरोहर आदि से सम्बंधित अपने लेख, साक्षात्कार, यात्रा वृत्तांत आदि भी प्रकाशनार्थ भेज सकें तो अनन्य के लिए यह उनका महत्वपूर्ण सहयोग होगा।

नववर्ष 2023 का बहुत सारी अपेक्षाओं के साथ अभिनंदन और स्वागत है।

अनन्य के प्रकाशन में किसी भी प्रकार का सहयोग करने वाले सभी साथियों का, अनन्य को पढ़ने वाले समस्त पाठकों का और अनन्य के लिए रचना भेजने वाले सभी रचनाकारों का हार्दिक आभार और नववर्ष की अनंत शुभकामनाएँ।

पत्रिका का यह अंक आपकी दृष्टि में कैसा है, यह जानने की हमें उत्सुकता रहेगी साथ ही आपकी प्रतिक्रियाओं और पत्रों की प्रतीक्षा भी रहेगी।

नववर्ष की शुभकामनाओं के साथ--डा० जगदीश व्योम



### नवगीत

-डॉ. जगदीश व्योम

ईमेल - jagdishvyom@gmail.com

## नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन

आमों पर खूब बौर आये भँवरों की टोली मँडराये बिगया की अमराई में फिर कोकिल पंचम स्वर में गाये फिर उठें गंध के गुब्बारे फिर महके अपना चंदन वन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

गौरैया बिना डरे आये घर में घोंसला बना जाये छत की मुँडेर पर बैठ काग कह काँव-काँव फिर उड़ जाये मन में मिसिरी घुलती जाये सबके आँगन हों सुखद सगुन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

बच्चों से छिने नहीं बचपन वृद्धों का ऊबे कभी न मन हो साथ जोश के होश सदा मर्यादित बनी रहे फैशन जिस्मों की यूँ न नुमाइश हो बदरँग हो जायें घर आँगन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन! घाटी में फिर से फूल खिलें फिर रुके शिकारे तैर चलें बह उठे प्रेम की मंदाकिनि हिम-शिखर हिमालय से पिघलें सोहनी मचले, महिवाल चले राँझे की हीर करे नर्तन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

विज्ञान, ज्ञान के छुए शिखर पर चले शांति के ही पथ पर हिंदी भाषा के पंख लगा कम्प्यूटर जी पहुँचें घर-घर वे देश रहें खुशहाल 'व्योम' धरती पर जहाँ प्रवासी जन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

थोड़ी-सी राजनीति सुधरे थोड़ा-सा जन-गण भी सुधरे मीडिया चले सच के पथ पर छँट जायँ निराशा के कुहरे शिक्षा के विस्तृत आँगन में कुछ और हो सके परिवर्तन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

7

कोरोना दुनिया से जाये पहले-सी रौनक आ जाये आतंकवाद का इस जग से नामोनिशान ही मिट जाये हर देश-देश का आपस में कुछ और बढ़ सके हित- चिंतन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!

हिंदी को जग में मान मिले अपने घर में पहचान मिले भारत की सब भाषाओं को पूरा-पूरा सम्मान मिले हर बोली के हों शब्द-कोश घोलें भाषा में मीठापन नव वर्ष तुम्हारा अभिनंदन!



### विनोद निगम

बाराबंकी (उ.प्र.) में जन्मे और होशंगाबाद में रह रहे डा॰ विनोद निगम देश के सुप्रसिद्ध नवगीतकार हैं, नवगीत दशक-3 और नवगीत अर्द्धशती जैसे नवगीत के ऐतिहासिक समवेत संकलनों में शामिल रहे हैं। जारी है लेकिन यात्राएँ, अगली सदी हमारी होगी, मौसम के गीत उनके प्रकाशित नवगीत संग्रह हैं। भारतीय साहित्य सम्मेलन प्रयाग सम्मान सहित अनेक अन्य प्रतिष्ठित संस्थाओं द्वारा सम्मानित/पुरस्कृत।



ईमेल - navgeet2011@gmail.com

### डा. विनोद निगम के चार नवगीत

-विनोद निगम

### 1. उनको लोग नमन करते हैं

बस्ती बड़ी अजीब यहाँ की, न्यारी है तहजीब यहाँ की जिनके सारे काम गलत हैं, सुबह गलत है शाम गलत है उनको लोग नमन करते हैं

जिनके हाथों जंग लगी है, जिनकी चलती सिर्फ जुबानें माला लिये हुए लोगों की, उनके पीछे लगी कतारें जिनके रिश्ते घने जुल्म से, जो अवसर के हाथ बिक गए उनके प्रवचन चौराहों पर, उनके हिस्से वैभव सारे बिगड़े सारे काज यहाँ के, उल्टे रीति-रिवाज यहाँ के जिनकी नीयत ठीक नहीं है, जिनके मकसद ठीक नहीं हैं उनको लोग नमन करते हैं

बकवासों से अधिक नहीं है, जिन्हें त्याग की, तप की बातें उनके नाम वसीयत कर दी, सुख सुविधाएँ जनम-जनम की जो, मंदिर क्या ईश्वर तक की कर लेते हैं सौदेबाजी उनके माथे रोली, चन्दन, उनके हाथों ध्वजा धरम की बिगड़ी सारी परम्पराएँ, बड़ी गलत चल रही हवाएँ जिनके सभी अधूरे वादे, जिनके सारे गलत इरादे उनको लोग नमन करते हैं

जिनके घर, ईमान पोस्टरों में टँग कर दम तोड़ चुका है उनका कीर्तन लोग कर रहे, उनके यश ढो रही दिशाएँ जिनके पाप बोलते छत पर, गलियाँ जिनके दोष गा रहीं उनका द्वार-द्वार अभिनन्दन, उनके गुण गा रही सभाएँ जाने कैसा चलन यहाँ का, बिगड़ा वातावरण यहाँ का जो युग के अनुकूल नहीं हैं, जिनके ठीक उसूल नहीं हैं उनको लोग नमन करते हैं

## 2. क्योंकि शहर छोटा है

खुलकर चलते डर लगता है, बातें करते डर लगता है क्यों कि शहर छोटा है

बहुत लोग हैं, बहुत जबानें, जो कि बिना जाने पहचाने सिर पर राख लगा देते हैं, तिरछी आँख लगा देते हैं यहाँ आँख से कहीं अधिक विश्वास कान की क्षमता पर है यहाँ देखते डर लगता है, दृष्टि फेंकते डर लगता है क्यों कि शहर छोटा है

जो कहने की बात नहीं है, वही यहाँ दुहराई जाती जिनके उजले हाथ नहीं हैं, उनकी महिमा गाई जाती यहाँ ज्ञान पर, प्रतिभा पर, अवसर का अंकुश बहुत कड़ा है सब अपने धन्धे में रत हैं, यहाँ न्याय की बात गलत है क्यों कि शहर छोटा है ऊँचे हैं लेकिन खजूर से, मुँह है इसीलिये कहते हैं जहाँ बुराई फूले-पनपे, वहाँ तटस्थ बने रहते हैं नियम और सिद्धान्त, बहुत ढंगों से परिभाषित होते हैं यहाँ बोलना ठीक नहीं है, कान खोलना ठीक नहीं है क्यों कि शहर छोटा है

बुद्धि यहाँ पानी भरती है, सीधापन भूखों मरता है उसकी बड़ी प्रतिष्ठा है, जो सारे काम गलत करता है यहाँ मान के नापतौल की, इकाई कंचन है धन है कोई सच के नहीं साथ है, यहाँ भलाई बुरी बात है क्यों कि शहर छोटा है खुलकर चलते डर लगता है, बातें करते डर लगता है क्यों कि शहर छोटा है

## 3. आओ चिड़ियों!

आओ चिड़ियों! तुमने तो घर आना छोड़ दिया, रूठ गईं क्यों, मेरी छत का दाना छोड़ दिया।

थक जाता था जब अलार्म, तब तुम्हीं जगाती थीं तिनके-तिनके सुख, दुनिया भर से ले आती थीं हारी-थकी लौटती आँगन, साँझ घोसलों में संग तुम्हारे अम्मा, नीम तले सो जाती थीं बच्चे कैसे पायें, चहकन की मिसरी, तुमने बैठ पेड़ पर दादी से बतियाना छोड़ दिया आओ चिड़ियों! तुमने तो...

कविता की रसधार प्रथम, तुमने ही घोली थी पीर तुम्हारी, वाल्मिकि के मुख से बोली थी रहती थीं तुम सदा मायके, छज्जों मुंडेरों भले पराये घर जाती, बिटिया की डोली थी आते नहीं काग तक अब तो, पितर पक्ष में भी तुमने भी घर छोड़ा, दूध मखाना छोड़ दिया आओ चिड़ियों! तुमने तो...

ऋषि मुनियों की पर्णकुटी में, तुमसे उत्सव था कलख की वह वंशी, फिर क्या नहीं बजाओगी डरती हो चीखों, विस्फोटों यो..यो म्यूजिक से बहुत व्यथित थे सैयदना भी, फिर कब गाओगी सतयुग, त्रेता द्वापर से हम सदा रहे सहचर, आज अजनबी, नाते नेह निभाना छोड़ दिया आओ चिड़ियों! तुमने तो...

### 4. चलो चाय पी जाये

मूल्य है रसातल में, दाम है कंगूरों पर समझदार चुप है, सब भार है लंगूरों पर यक्ष प्रश्न, कैसे यह बड़ी उमर जी जाये छोड़ो उलझन सारी, चलो चाय पी जाये

मुखिया है मौन, डोर उसकी नेपथ्य में "मुखिया है मुखर, कथ्य ढलना है कृत्य में" पक्ष और विपक्ष, सभी घिरे हैं, असत्य में उँगलियाँ उठाने वाले लँगड़े लूले हैं कौरव क्या, पांडव तक शामिल दुष्कृत्य में डिग्नियाँ दुकानों में, तरुणाई थानों में स्वर्ण, सुरा सुन्दरी, धर्म के ठिकानों में मठाधीश बहरे, किससे गुहार की जाये छोड़ो असमंजस, बस चलो चाय पी जाये। अन्ध, बिधर शासन है, निरंकुश प्रशासन है अनिगन बैसाखियाँ, हिलता सिंहासन है मन काले, धन काले लूट के जतन काले, पांचाली राजनीति, तंत्र का दुशासन है बेबस है विधि विधान, संरक्षक बेजुबान दुर्घष योद्धाओं के, कुठित है धनुष बान फिर वही सवाल, अब कमान किसे दी जाये छोड़ो झंझट सारे, चलो चाय पी जाये।

कविता, संगीत, कला, सृजन से हुए व्यापार कीर्ति, यश अलंकरण, बने सिर्फ धनाधार तेल बेचते बच्चन, सचिन बाँटते कोला भरमाते विज्ञापन, बुद्धि हुई तार-तार मीडिया बिकाऊ है, सिनेमा उबाऊ है खाद्यों में मिक्सिंग है, मैचों में फिक्सिंग है समाधान क्या हो, किससे सलाह ली जाये छोड़ो भ्रम, भटकावे, चलो चाय पी जाये छोड़ो उलझन सारी, चलो चाय पी जाये।

-विनोद निगम

### कमलेश भट्ट कमल

सुलतानपुर, उ.प्र. में जन्मे एवं वर्तमान में प्रेटर नोएडा वेस्ट में निवास कर रहे सुप्रसिद्ध ग़ज़लकार कमलेश भट्ट कमल की अब तक विभिन्न विधाओं में 23 कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। आपने हाइकु पर विशेष कार्य किया है। कई रचनाओं का उर्दू, नेपाली, मराठी तथा अंग्रेज़ी में अनुवाद। कुछ रचनाएँ विभिन्न पाठ्यक्रमों में संकलित। कई संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत/सम्मानित।



ईमेल - kamlesh59@gmail.com

# 'हाइकु दिवस' ४ दिसंबर हाइकु कविता की एक सदी

### -कमलेश भट्ट कमल

"चीन और जापान की चित्रकला और जापान की काव्य कला से पश्चिम के कई कवियों ने नयी दृष्टि पायी। हम भारतवासी जो केवल 'पूर्व' होने के नाते 'दूरपूर्व' और 'पश्चिम' के बीच में आते हैं इन देशों की कला से उतने दूर नहीं हैं जितने फ्रांस या जर्मनी के कवि थे। फिर भी हम उनसे नयी दृष्टि पा सकते हैं....जापानी "ज़ेन" भारतीय ध्यान का ही रूप है। ...."

'अपनी भावना को कम से कम शब्दों में व्यक्त करने की प्रकृति जापानी कविता में देखने को मिलती है। केवल तीन कतार में कविता लिखकर जापानी कवि या पाठक इतिश्री करते हैं जो दुनिया के किसी भी भाग में नहीं मिलता।'' शान्ति निकेतन में वर्षों जापानी के अध्यापक रहे साइजी माकिनो ने अपनी हिन्दी पुस्तक 'जापानी आत्मा की खोज' के पृष्ठ 242 पर उक्त उद्धरण, रवीन्द्र नाथ टैगोर की 1916 में पहली जापान यात्रा के संस्मरणों के आधार पर

दिया है। हाइकु कविता की किसी भी भारतीय भाषा में यह पहली चर्चा थी जो 1323 (बंगाब्द) अर्थात 1916 ई॰ में छपी टैगोर की बांग्ला पुस्तक 'जापान यात्री' में मिलती है। इस तरह हाइकु कविता वर्ष 2016 में भारत में अपने प्रवेश की एक शताब्दी पूरी कर चुकी है। इस अवधि में हिन्दी में ही नहीं बांगला, गुजराती, मराठी, असमिया, उड़िया, तमिल, तेलुगू, मलयालम, सिंधी, उर्दू, संस्कृत, नेपाली आदि अन्य भारतीय भाषाओं में भी हाइकु ने अपनी-अपनी तरह से काव्य-यात्रा की है। बल्कि इससे भी आगे वह विभिन्न भाषाओं की उपभाषाओं और बोलियों तक भी विस्तार पा चुकी है। इस यात्रा को भगीरथ की तरह भारत भूमि पर व्यापक स्तर पर प्रचारित-प्रसारित करने का श्रेय जिस व्यक्ति को जाता है वे हैं ज०ने० वि०वि०, नई दिल्ली के पूर्व जापानी भाषा विभाग के प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष डॉ० सत्यभूषण वर्मा (04.12.1932 -13.01.2005)। प्रो.वर्मा के निधन वर्ष 2005 से उनका जन्मदिवस 04 दिसम्बर प्रत्येक वर्ष हाइकु दिवस के रूप में मनाया जा रहा है।

अभी तक उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर 1959 में प्रकाशित अज्ञेय की काव्य पुस्तक 'अरी ओ करुणा प्रभामय' में हिन्दी में हाइकु की प्रथम अधिकृत चर्चा की बात की जाती है। इस तरह वर्ष 2019 में हिन्दी में हाइकु की प्रथम अधिकृत चर्चा के छः दशक व्यतीत हो चुके हैं। अज्ञेय ने अपनी उक्त पुस्तक के 'एक चीड का खाका' नामक खण्ड में 27 ऐसी छोटी-छोटी कविताएँ सम्मिलित की हैं जो या तो जापानी हाइकु के अनुवाद हैं या हाइकु से प्रभावित रचनाएँ हैं। पुस्तक के पहले संस्करण की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं- 'चीन और जापान की चित्रकला और जापान की काव्य कला से पश्चिम के कई कवियों ने नयी दृष्टि पायी। हम भारतवासी जो केवल 'पूर्व' होने के नाते 'दूरपूर्व' और 'पश्चिम' के बीच में आते हैं इन देशों की कला से उतने दूर नहीं हैं जितने फ्रांस या जर्मनी के कवि थे। फिर भी हम उनसे नयी दृष्टि पा सकते हैं..... जापानी "ज़ेन" भारतीय ध्यान का ही रूप है किन्तु ज़ेन का साहित्य भण्डार आज के भारतीय लेखक के लिए भी कितना स्फूर्तिप्रद है!'

देश में आज हाइकु की जो गति-प्रगति है उसे देखकर सहज ही कहा जा सकता है कि मात्र 17 अक्षरों वाली (पहली पंक्ति में 5 दूसरी में 7 व तीसरी में 5 अक्षर, आधे अक्षरों की गिनती नहीं होती है) तीन पंक्तियों की कविता के बारे में अज़ेय का विश्वास शत-प्रतिशत सही था। इस अत्यन्त सीमित कलेवर वाली रचना में कविता का होना अनिवार्य शर्त है, अन्यथा रचना हाइकु का केवल ढाँचा मात्र बनकर रह जाती है। कविता अगर नहीं मिलती है तो उसके हाइकु होने पर ही प्रश्नचिह्न लग जाता है। आप पूछ सकते हैं कि हाइकु में 5 और 7 वर्णों को ही क्यों प्रमुखता दी गयी है? किन्तु इस प्रश्न का उत्तर शायद आसान नहीं हैं। जापानी साहित्य के सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'कोजिकि' (रचनाकाल ७१२ ई0) में कथा के बीच पिरोये गए लोकगीतों में भी 5 और 7 वर्णों की आवृत्ति मिलती हैं। जापानी के प्रथम कविता संग्रह 'मान्योशू' जिसमें तीसरी और आठवीं शताब्दी के बीच के 260 कवियों की 4514 कविताएँ संकलित है, में प्रयुक्त कविता के तीन प्रमुख रूपों चोका, सेदोका और ताँका में भी 'कोजिकि' परम्परा का निर्वाह करते हुए 5 व ७ वर्णों की आवृत्तियाँ मौजूद हैं। ताँका ५,७,५,७,७ के वर्णक्रम वाली 31 वर्णों की कविता है तथा इसी का प्रारम्भिक अंश 5-7-5 आगे चलकर स्वतंत्र कविता के रूप में हाइकु नाम से प्रतिष्ठित हुआ। हाइकु को आधुनिक काव्यविधा के रूप में प्रतिष्ठा दिलाने वाले कवि थे मात्सुओ बाशो (१६४४-१६९४ ई०)। कालान्तर में हाइकु जापान

के सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग बनता चला गया और धीरे-धीरे जापान की सीमाएँ लाँघ कर यह दुनिया की तमाम भाषाओं में प्रचलित और लोकप्रिय होता चला गया। आज इस कविता को अन्तरराष्ट्रीय विधा के रूप में मान्यता और ख्याति प्राप्त है। इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका हाइकु को 'कहने से कहीं ज्यादा संकेत करने

वाली विधा' के रूप में परिभाषित करता है।

अपने सीमित और संक्षिप्त कलेवर के भीतर भी हाइकु को कई अनुशासनों का पालन करना होता हैं। एक अच्छे और आदर्श हाइकु की तीनों पंक्तियाँ सर्वथा पूर्ण और स्वतन्त्र होती हैं, लेकिन तीनों एक साथ मिलकर एक बड़ी और प्रभावपूर्ण कविता रचती हैं। सहजता भी हाइकु का एक ऐसा गुण है, जिसके बिना हाइकु बिखराव का शिकार हो सकता है।

कलेवर की दृष्टि से दुनिया की सबसे छोटी कविता हाइकु ने सृजन के स्तर पर धीरे-धीरे आन्दोलन का रूप लेना तब शुरू किया जब 1978 में प्रो॰ सत्यभूषण वर्मा ने जेएनयू में 'भारतीय हाइकु क्लब' की स्थापना करके अन्तर्देशीय पत्र पर 'हाइकु' नाम से एक लघुपत्रक का प्रकाशन प्रारम्भ किया। हाइकु जैसी लघु कलेवर वाली रचना के प्रचार-प्रसार के लिए यह पत्रक वरदान सिद्ध हुआ। फरवरी 1978 से अगस्त 86 के बीच प्रकाशित 'हाइकु' के कुल 26 अंकों ने हाइकु को न केवल हिन्दी में बल्कि अनुवादों के माध्यम से हिन्दीतर भारतीय भाषाओं में भी कवियों के बीच लोकप्रिय बनाने का अभूतपूर्व कार्य किया। प्रो. सत्य भूषण वर्मा ने जापानी भाषा में अपने विस्तृत अध्ययन के पश्चात

पहली बार यह समझाया कि 'हाइकु अनुभूति के चरम क्षण की अभिव्यक्ति की कविता है'। बाशो ने इसी को अपने ढंग से परिभाषित करते हुए पहले ही कहा था कि 'हाइकु दैनिक जीवन में अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति है, पर वह सत्य एक विराट सत्य का अंग होना चाहिए।' खीन्द्रनाथ ठाकुर ने हाइकु कविता में शब्द-संयम के साथ-साथ भाव-संयम पर भी पर्याप्त जोर दिया है। जापानी के अनुसार 'हाइकु

में तुक का महत्व नहीं है पर स्वरानुरूपता, अनुप्रास और लय पर विशेष बल है।'

इन पंक्तियों के लेखक द्वारा संपादित हिन्दी के प्रथम प्रतिनिधि हाइकु संकलन 'हाइकु-1989' एवम् आगे चलकर 'हाइकु-1999', 'हाइकु-2009' व 'हाइकु-2019' ने भी हाइकु की उक्त लोकप्रियता को सृजन के स्तर पर आन्दोलन बनाने में यत्किंचित सहयोग करने का प्रयास किया। संकलनों की इस श्रृंखला को इन अथीं में ऐतिहासिक भी कहा जा सकता है कि शुरू के दो संकलनों की भूमिका प्रो. सत्यभूषण वर्मा ने लिखी। इतना ही नहीं, दोनों का लोकार्पण भी प्रो.वर्मा के सौजन्य से ही दिल्ली में हुआ। 'हाइकु-1989' का लोकार्पण तो जेएनयू में नामवर सिंह के हाथों हुआ था। आलोचक प्रवर नामवर सिंह ने बहुत पहले ही हाइकु कविता के स्वभाव को पहचान लिया था। इसका उल्लेख करते हुए प्रो.सत्यभूषण वर्मा ने अपनी पुस्तक में उल्लेख किया है-

'हाइकु एक संस्कृति है, एक जीवन-पद्धति है। तीन पंक्तियों के लघु गीत अपनी सरलता, सहजता, संक्षिप्तता के लिए जापानी-साहित्य में विशेष स्थान रखते हैं। इसमें एक भाव-चित्र बिना किसी टिप्पणी के, बिना किसी अलंकार के प्रस्तुत किया जाता है, और यह भाव-चित्र अपने आप में पूर्ण होता है।' (जापानी-हाइकु और आधुनिक हिंदी-कविता, पृष्ठ-107)

आज हिन्दी ही नहीं, हिन्दी की क्षेत्रीय भाषाओं विशेष रूप से भोजपुरी तक में भी कई सौ हाइकु कवि सृजनरत हैं। सैकड़ों एकल संग्रह एवं संकलन भी आ चुके हैं।

विश्वविद्यालयों में हाइकु शोध का प्रिय विषय बन चुका है। मेरठ(डॉ.प्रभा शर्मा) व लखनऊ वि॰वि॰ (डॉ.करुणेश प्रकाश भट्ट) पहले ही हाइकु-केन्द्रित शोध-प्रबन्धों को मान्यता प्रदान करके शोध उपाधियाँ दे चुके हैं। बाद के वर्षों में पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़ (डॉ.बलविंदर सिंह), कानपुर विश्वविद्यालय (डॉ. पूनम श्रीवास्तव ), बी आर आंबेडकर विश्वविद्यालय (डॉ. संगीता पांडेय), सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर, गुजरात (डॉ. पूर्वा शर्मा) एवं सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट, गुजरात (डॉ. तृप्ति दवे) ने भी हाइकु कविता से जुड़े विषयों पर शोध उपाधियाँ प्रदान करके इस विधा को अकादिमक गौरव प्रदान किया।

पूर्णिमा वर्मन और डॉ॰ जगदीश व्योम की अगुवाई में जहाँ इन्टरनेट पर देश-विदेश में हाइकु का नेटवर्क विकसित हुआ है, वहीं चण्डीगढ़ की डॉ॰ अंजिल देवधर ने देश-विदेश की अंग्रेजी हाइकु कविताओं का अनुवाद हिन्दी में तथा हिन्दी हाइकु कविताओं का अनुवाद अंग्रेजी में करके हिंदी हाइकु को अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर विस्तृत फलक देने का प्रयास किया है। अन्य कई भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद का कार्य जारी है।

मूलतः जापान के ज़ेन साधकों द्वारा कोई 350 वर्ष पूर्व प्रारम्भ की गई हाइकु कविता की जड़ें भारत वर्ष में गायत्री मंत्र तक में तलाशी गयी हैं तथा रायबरेली के शम्भुशरण द्विवेदी 'बन्धु' द्वारा इसे 'त्रिशूल' नाम देकर इसका हिन्दीकरण करने का प्रयास किया गया, लेकिन लोकप्रिय हुआ 'हाइकु' नाम ही। वस्तुतः हाइकु की बढ़ती लोकप्रियता के मूल में एक प्रमुख कारण यह भी रहा कि भारत में इस जापानी शैली का केवल शिल्प ही अंगीकृत हुआ, विषयवस्तु भारतीय ही बनी रही। यही नहीं धीरे-धीरे भारतीय काव्य के तुकान्त ही नहीं उपमा, रूपक जैसे अलंकार आदि भी इससे जुड़ते चले गये। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने वर्ष 1916

ई० में जब हाइकु को दुनिया की सबसे छोटी कविता कहा था तो उनका आशय उसके एक पूर्ण कविता होने से ही था। लेकिन कुछ लोगों ने अतिउत्साह में हाइकु को छन्द ही बना डाला और हाइकु गीत, हाइकु ग़ज़ल ही नहीं सामने आए, हाइकु खण्ड-काव्य और हाइकु-रामायण भी लिखे जाने लगे। यद्यपि यह प्रवृत्ति हाइकु के 17 अक्षरों के कलेवर का अतिक्रमण करने के कारण एक पूर्ण कविता के रूप में हाइकु को क्षति पहुँचा रही है, फिर भी लोक प्रवाह को कैसे रोका जा सकता है?

डॉ॰ भगवतशरण अग्रवाल, डॉ॰ शैल रस्तोगी, डॉ॰ सुधा गुप्ता, डॉ॰ विद्या बिन्दु सिंह, पारस दासोत, डॉ॰ सुरेन्द्र वर्मा, रमाकांत श्रीवास्तव, निलनी कान्त, डॉ॰ कमल किशोर गोयनका, डॉ॰ मोतीलाल जोतवाणी जैसे पुराने हाइकुकारों के बाद वरिष्ठ कवियों/गीतकारों गोपालदास नीरज, डॉ॰शिव बहादुर सिंह भदौरिया, सूर्यभानु गुप्त, ज्ञानेन्द्रपित, डॉ॰ कुँअर बेचैन जैसे महत्वपूर्ण रचनाकारों का इस विधा की ओर आकृष्ट होना सुखद संकेत देता है। यह सूची दिनों दिन लंबी ही होती जा रही है।

हाइकु कविता विशेष रूप से हिंदी हाइकु कविता को देश-विदेश में आगे बढ़ाने में कुछ और नामों का उल्लेख आवश्यक है। ऐसे नामों में डा. जगदीश व्योम, अनूप भार्गव, पूर्णिमा वर्मन, मीनू खरे, पवन कुमार जैन, रामेश्वर कांबोज हिमांशु, मिथिलेश दीक्षित, विभा रानी श्रीवास्तव, आर पी शुक्ल, वीरेंद्र आज़म, के बी व्यास, प्रदीपकुमार दाश 'दीपक', कंचन अपराजिता, पूर्वा शर्मा, लवलेश दत्त आदि- आदि शामिल हैं।

हाइकु कविता के कारण देश के कई शहर और कस्बे हाइकु केंद्र के रूप में सामने आए हैं। अहमदाबाद, ग़ाज़ियाबाद, अजमेर, दिल्ली, मेरठ, रायबरेली, डलमऊ, अलीगढ़, होशंगाबाद, लखनऊ, चंडीगढ़, जोधपुर, बरगढ़, नोएडा, इंदौर, फरीदाबाद, मथुरा, कानपुर, रुड़की, फतेहपुर, हिसार, प्रयागराज, देहरादून, नागपुर, ग्वालियर, हैदराबाद, बसना, विदिशा, गंज बासौदा, सांकरा, बड़ौदा, मुंबई, अंडाल, सहारनपुर, रीवा, पटना, अमरावती, कटक, सुलतानपुर, शिकोहाबाद, फतेहगढ़ जैसे कितने ही स्थान इस सूची में जुड़ चुके हैं।

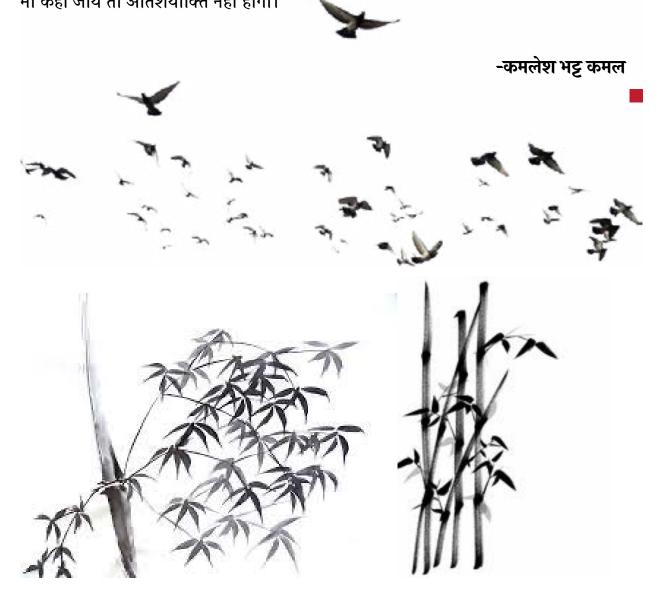
देश में ही क्यों, विदेशों तक में भी हाइकु कविता का डंका बजता देखा जा सकता है। हिंदी हाइकु कविता के विकास में प्रवासी हाइकुकारों का भी विशिष्ट योगदान है-विशेष रूप से अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, सिंगापुर, संयुक्त अरब अमीरात, कनाडा, नार्वे, नीदरलैंड, फीजी, कुवैत, बहरीन, मारीशस, सिंगापुर, नेपाल आदि देशों में निवास कर रहे प्रवासी रचनाकारों ने अपनी हाइकु कविताओं के माध्यम से महासागरों के असीमित विस्तार को भी पाट दिया है। इन कवियों की हाइकु रचनाओं में अभिव्यक्त प्रवास में जीवन के सुख-दुख, देश से दूर हो जाने की टीस, वहाँ की सभ्यता, संस्कृति व जन-जीवन की झलकियाँ तथा प्रकृति के अनूठे बिम्बों और चित्रों ने हिंदी हाइकु कविता को समृद्ध करने का कार्य किया है।

डॉ. जगदीश व्योम द्वारा वर्ष-2022

में 'हिंदी हाइकु कोश' का संपादन हिंदी हाइकु ही नहीं, भारतीय भाषाओं की दुनिया में मील का पत्थर साबित हुआ है। 728 पृष्ठों का यह कोश देश-विदेश के चुनिंदा 1075 हाइकुकारों की श्रेष्ठ 6386 हाइकु कविताओं का अभूतपूर्व संकलन भी है।

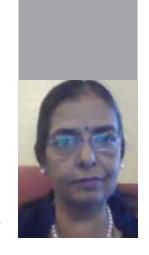
कलेवर की संक्षिप्तता ने हाइकु के व्यावसायिक प्रयोग के भी द्वार खोले हैं। टैक्सटाइल, सिरैमिक्स, ग्लास, फर्नीचर, हस्तशिल्प आदि उद्योगों में हाइकु कविताओं का सहज ही प्रयोग किया जा सकता है। चित्रकार जितेन साहू ने 'हाइकु वाटिका' बनाने के साथ ही लोगों के घरों में जाकर उनके पर्दों पर हाइकु चित्रित किए हैं, वहीं पारस दासोत ने अपने विद्यालय की दीवारों और कुछेक समाधि प्रस्तरों पर भी हाइकु उकेरने के प्रयोग किए हैं। हाइकु की तर्ज पर सिनेमा में 'सिनेकु' विधा भी प्रकाश में आ चुकी है।

समय के निरन्तर बढ़ते अभाव से जूझते आज के आदमी के लिए हाइकु सृजन व पठन-पाठन दोनों साहित्य के आस्वाद के लिए बहुत उपयोगी विधा है। इस अर्थ में हाइकु को 21वीं सदी की कविता भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।



#### इला प्रसाद

राँची में जन्मी और ह्यूस्टन, अमेरिका में स्थाई रूप से रह रहीं डा. इला प्रसाद हिंदी साहित्य के पाठकों के लिए अमेरिका से एक सुपरिचित नाम, पाँच कहानी संग्रह, एक उपन्यास, एक सम्पादित पुस्तक तथा दो कविता संग्रह प्रकाशित। विश्व हिंदी न्यास, अमेरिका की पत्रिका "हिंदी जगत" की सह सम्पादक तथा न्यास की कार्यकारिणी समिति की सदस्य। संत थामस विश्व विद्यालय, ह्यूस्टन, टेक्सास में भौतिकी की प्राध्यापिका।



ईमेल - Ila\_prasad1@yahoo.com

## बैसाखियाँ

#### -इला प्रसाद

"हरे रंग के गुब्बारों और शैमरोक के चिह्न से सजी विभिन्न कम्पनियों का इश्तेहार लगाए हुए गाड़ियाँ, जिनकी खुली छतों से ढेर सारे लोग दर्शकों को लक्ष्य कर मालाएँ फ़ेंक रहे थे, एक-एक कर गुज़रती रहीं। गुजरती हुई गाड़ियों को वह दिलचस्पी से देखती रही थी। दर्शकों में बच्चे अधिक थे और उनके अभिभावक पिछली पंक्तियों में खड़े चाकलेट आदि लूटने में उनकी सहायता कर रहे थे।...."

इस बार वह पूरी तरह तैयार हो कर आई थी। एक दिन पहले ही कम्प्यूटर पर देख लिया था, नाइन्टीन सिक्स्टी पर सेन्ट पैट्रिक्स डे की परेड दोपहर दो बजे से शाम चार बजे के बीच थी। रविवार होने की वजह से और सहूलियत थी। उसने कई काम कल ही खत्म कर लिए थे।

यह आइरिश त्योहार हमेशा उसे होली की याद दिलाता है और मार्च के महीने में होने की वजह से अक्सर ही होली या तो बीत चुकी होती है या फ़िर आनेवाली होती है। सेन्ट पैट्रिक्स डे यानि हरे रंगों की बहार ! हरी शर्ट, हरी टोपी, हरे मोतियों की माला और आँखों पर हरे रंग के फ़्रेम का चश्मा। कुछ ने हरा रंग चेहरे पर पोत रखा था। हरा गुलाल भी दिखाई पड़ा। हरियाली सब ओर। वसंत के आगमन की सूचना देता हुआ, संत पैट्रिक के नाम पर मनाया जाने वाला यह आइरिश त्योहार अब अमेरिका की जिन्दगी का हिस्सा हो चुका है। यूँ तो उसने देखा है कि खुलता हुआ हरा रंग ही- जैसे कि घास का होता है, हर ओर छाया होता है लेकिन हरे के बाकी शेड भी देखने को मिल जाते हैं। अमूमन वह भी उस दिन कोई हरी शर्ट डाल लेती है अपनी ब्लू जीन्स पर और भीड़ में शामिल हो जाती है। उसे यह परेड अच्छी लगती है और यदि परेड के दौरान दर्शकों की तरफ़ फ़ेंके गए चाकलेट, मोतियों की माला, कूपन आदि में से शैमरॉक (तीन पत्तियों के आकार वाला) का चिह्न यदि उसे मिल गया तो वह आम आयरिश की तरह मान लेती है कि यह उसके लिए सौभाग्य लाने वाला है।

दरअसल ऐसा ही उसके साथ होता भी आया है। पहली बार वह जबरन इस परेड के दर्शकों में शामिल हुई थी। वह सप्ताह भर का सौदा-सुलुफ़ लेने बाज़ार निकली थी और लौटते वक़्त जाना कि घर तक पहुँचने के रास्ते बन्द हैं। सड़क पर शेरिफ़ की गाड़ियाँ हार्न देती घूम रही थीं। फ़ुट्पाथों पर लोग जमे थे और किसी भी तरह कार निकालने की गुंजाइश नहीं थी। मजबूरन उसने कार पार्किंग लॉट में कार पार्क की थी और सड़क के दोनों ओर हजारों की संख्या में खड़े दर्शकों में शामिल हो गई थी। तब उसने पीली शर्ट पहनी हुई थी और कुछ भी हरा नहीं। वह भीड से अलग दिखाई दे रही थी कुछ थोड़े से अन्य लोगों की तरह जो उसी की तरह शायद फँस गये थे। हरे रंग के गुब्बारों और शैमरोक के चिह्न से सजी विभिन्न कम्पनियों का इश्तेहार लगाए हुए गाड़ियाँ, जिनकी खुली छतों से ढेर सारे लोग दर्शकों को लक्ष्य कर मालाएँ फ़ेंक रहे थे, एक-एक कर गुज़रती रहीं। गुजरती हुई गाड़ियों को वह दिलचस्पी से देखती रही थी। दर्शकों में बच्चे अधिक थे और उनके अभिभावक पिछली पंक्तियों में खड़े चाकलेट आदि लूटने में उनकी सहायता कर रहे थे। एक ट्रक या कार गुजरती और बीड्स- बीड्स की गुहार मच जाती। हैप्पी सेन्ट पैट्रिक्स डे के नारों से आकाश गूँज उठता। "प्राउड टू बी एन आयरिश" के नारे, गुज़रती गाड़ियों पर पढ़ कर वह मुस्कराती रही थी। तरह-तरह की गाड़ियाँ- कोई जूते के आकार की, कोई घर बना हुआ ... बड्लाइट की ट्रक से उस शराब का विज्ञापन करती गाड़ियाँ की-चेन फ़ेंक रही थीं जिसमें कार्डबोर्ड की बडलाइट की बोतल जुड़ी हुई थी। सबकुछ हरे रंग का। बीच-बीच में बच्चों की टोलियाँ खूबसूरत हरे रंग की ड्रेस पहने जिमनास्टिक के करतब भी दिखा रही थीं। कुछ गीत गाते हुए बच्चे भी गुज़रे। एक म्यूजिक कम्पनी की गाड़ी कर्णप्रिय धुनें बजाती गुज़र गई। कुल मिला कर सुषमा को यह जुलूस बहुत अच्छा लगा था। दर्शनीय!

हालाँकि उसने बाकी लोगों की तरह चिल्लाकर बीड्स नहीं माँगे थे तब भी काफ़ी कुछ उसके पैरों के पास आकर गिरा था। कई रंगों की मोतियों की मालाएँ, चाकलेट और एक टिन की बनी चमकीली तीन पत्ती भी। बीड्स वे लों जो ईसाई हैं, उसे क्या ...! उसने सोचा था किन्तु फ़िर सारा कुछ बटोरती चली गई। वह दिन अच्छा गुज़रा था। मन में जैसे हरियाली छा गई थी। बहुत कुछ आँखों के रास्ते भी मन में उतरता है।

जब उसी दिन पोस्ट किए गए रिसर्च पेपर की स्वीकृति की सूचना, करीब महीने भर बाद मिली तो उसने मान लिया कि यह तीन पत्ती सचमुच शुभ शगुन है। अगले साल वह फ़िर से जुलूस देखने गई। उसने भीड़ के साथ उछल-उछल कर बहुत कुछ लपका था। उसके हाथ कई शैमरॉक के चिह्न वाले रैपर लगे चाकलेट आये थे। उसके बाद जब अचानक ही एक दिन लुइस आकर उसके पैसे लौटा गया तो वह सोचने पर मजबूर हो गई थी। इस तीन पत्ती के आकार में कुछ तो है। सेन्ट पैट्रिक डे एक शुभ दिन का नाम है। तब से हर साल वह अपनी

किस्मत जानने को इस भीड़ में शामिल हो जाती है। फ़िर कोई तीन पत्ती मिलेगी क्या? कोई चाकलेट ही, जिसके रैपर पर यह चिह्न बना हो! बल्कि अब तो वह अपनी मित्र मंडली को भी यह जुलूस देखने के लिए प्रोत्साहित करती है। दूसरी सारी वजहों को किनारे कर देने पर भी यह जुलूस दर्शनीय तो है ही और थोड़ी देर के लिए आप बच्चों में शामिल हो कर खुद भी बच्चे हो जाते हैं।

यही सब सोच कर उसने वन्दिता को फ़ोन किया था।

"कल सेन्ट पैट्रिक्स डे है। आ रही है?"

"वह क्या होता है?"

"कम ऒन यार! तेरे दो बच्चे हैं और तुझे ही नहीं मालूम?"

"बता न।"

सुषमा ने विस्तार से जानकारी दी थी। शैमरॉक और गोल्डेन बीड्स से जुड़े आयरिश विश्वास और संत पैट्रिक के बारे में उसने कम्प्यूटर पर पढ़ा था। ईसाई मान्यताएँ यूँ भी उसके लिए नई नहीं थीं। वह बचपन से ईसाई कान्वेन्ट स्कूल में पढ़ी थी। ईसाई धर्म की भी इतनी शाखाएँ है और एक चर्च दूसरे से अपनी मान्यताओं को लेकर कितने भिन्न हो सकते है, उसी जीसस क्राइस्ट पर विश्वास के बावजूद, यह जरुर उसने

"उसने एक छोटा सा भारत अपने मन में बसा लिया है और उसी के साथ वह जीती चली जा रही है। जीती चली जायेगी। मन के उस कोने में जहाँ उसका देश बसता है, वह अक्सर घूम आती है। अपने दोस्तों, गली-मुहल्लों, माँ बाप, भाई बहनों, फ़ूल- पौधों से बतिया लेती है और फ़िर अमेरिका में जीने लगती है, जो उसका वर्तमान है।" अमेरिका आने के बाद जाना। यहाँ आकर ईसाइयत के इतने विभिन्न रूप देखने को मिलेंगे यह उसके लिए भारत में रहते हुए कल्पनातीत था। और अभी तो वह अपना सारा ज्ञान वन्दिता के सामने उडेल रही थी। लेकिन वन्दिता तो वन्दिता ठहरी। अमेरिका में उसी की तरह पिछले पाँच साल से रहने के बावजूद थोड़ी भी नहीं बदली। अपनी भारतीय मंडली में घुमेगी। हर महीने उसके घर सत्यनारायण कथा या उस जैसा ही कोई उत्सव होगा। विश्व हिन्दू परिषद से जुड़ी होने के कारण

भी उसका दायरा काफ़ी बड़ा है। आए दिन भीड़ लगी होती है। कभी-कभी सुषमा को आश्चर्य होता है, कैसे सँभालती है यह सब कुछ। दो बच्चे, नौकरी, पित और आये दिन चले आने वाले अतिथि। फ़िर वह हर किसी के घर पूजा में जायेगी भी। यह दीगर बात है कि उसी की वजह से सुषमा भी कुछ पर्व त्यौहार मना लेती है। होली-दीवाली में उसके घर चली जाती है तो अकेला नहीं लगता!

"हाँ, हाँ, समझ गई। अरे अभी चैत्र के नवरात्र चल रहे हैं, यह समय तो शुभ होता ही है!"

सुषमा को लगा यह कभी नहीं सुधरेगी!

"अरे यार, बच्चों को तो भेज। वे मजे
कर लेंगे। सब होते हैं, हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई।
आयरिश और नान- आयरिश। यह अमेरिका
है!"

"अच्छा, अगली बार देखेंगे। अपने सब डिवीजन में होली- मिलन है आज। ड्राइव तो मुझे ही करना होगा न। नाइटीन सिक्सटी बहुत दूर है यहाँ से।"

"तो मिनट मेड पार्क चली जा। डाउन टाउन। वहाँ का जुलूस तो और अच्छा है। तेरा दीपू तो कह रहा था कि उसे मालूम है सेन्ट पैट्रिक्स डे क्या होता है।"

"हाँ, सब स्कूल में सीख आते हैं। मैं तो बहन, परेशान हो गई। वाइ एम सी ए स्विमिंग के लिए ले जाओ। फ़िर कराटे सीखना है। होम वर्क करवाओ। इन्हें तो फ़ुरसत ही नहीं मिलती। सब मुझे ही करना है।"

"चल, जाने दे।"

सुषमा जानती है, वह नहीं आयेगी। न ही बच्चों को उसके साथ जाने देगी। अमेरिका आने के बाद भी भारतीय पित अन्य मामलों में चाहे बदल जाएँ, पत्नी को लेकर भारतीय बने रहते हैं। यह सुविधाजनक है!

लेकिन सुषमा जायेगी। उसे तीन पत्ती चाहिए! इस बार उसके पास लखनवी अंगूरी रँग का कुर्ता है- उसका सबसे प्रिय और इस वक्त उसने वही पहना हुआ है।

यह नाइन्टीन सिक्स्टी अक्सर उसे भ्रमित करता है। पहली बार तो जब सुना था तो उसकी समझ में ही नहीं आया था कि यह संख्या किसी रास्ते को सूचित करती है। अभी भी वह अक्सर गलत मोड़ ले लेती है और गलत रास्ते पर पहुँच जाती है लेकिन आज ऐसा नहीं हुआ। उसने कार सीयर्स के बड़े से गोदाम के पास पार्क की और कार की ट्रंक से कुर्सी निकाल ली। उसे लगा था कि वह लेट हो गई है लेकिन अभी परेड शुरू नहीं हुई थी। कई सारे दर्शक सड़क के दोनों ओर कुर्सियाँ डाले बैठे थे। पार्किंग लॉट में घुसने और निकलने का रास्ता भी कुर्सियों से पटा पड़ा था। वह नाइन्टीन सिक्स्टी के पीछे की तरफ़ से आई थी, इसीलिए घुस सकी थी। बैठने वालों में तमाम बड़े थे। बच्चों की कतार तो उत्साह से भरी उचक-उचक कर सड़क के उस सिरे पर नजर लगाए थी जहाँ से जुलूस आनेवाला था। उसने एक कोने में अपनी मुड़ने वाली कुर्सी खोली और जम गई। उसके ठीक बगल में एक गोरी वृद्धा आँखों पर शैमरॉक के आकार का हरा चश्मा लगाए हुए है। उसे अपनी ओर देखता पाकर वह मुस्कराई। सुषमा ने भी इशारा कर दिया- बहुत सुन्दर! वह खुश हो गई।

इस बार फ़िर अगर शैमरॉक मिलता है तो जरुर उसका चयन होने वाला है। वह इन्टरव्यू देगी। अब आगे पढ़ाई करने का उसका इरादा नहीं। वह व्यवस्थित होना चाहती है। अपनी जिन्दगी की अगली पारी खेलना चाहती है। अमेरिका से वापस लौटने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। यहाँ की सुविधापूर्ण जिन्दगी की आदत अब उसे भारत की धूल-पसीने भरी जिन्दगी से किनारा करने पर मजबूर करती है। उसने एक छोटा सा भारत अपने मन में बसा लिया है और उसी के साथ वह जीती चली जा रही है। जीती चली जायेगी। मन के उस कोने में जहाँ उसका देश बसता है, वह अक्सर घूम आती है। अपने

दोस्तों, गली-मुहल्लों, मां बाप, भाई बहनों, फ़ूल- पौधों से बितया लेती है और फ़िर अमेरिका में जीने लगती है, जो उसका वर्तमान है। वह जानती है यह उस जैसे तमाम भारतीयों का सच है। और वन्दिता चाहे अपने धर्म को लेकर आग्रही हो, देश को लेकर वह भी नहीं है।

इस इंटरव्यू को लेकर वह कई दिनों से उधेड़बुन में है... जाए न जाए। पहले तो लगता रहा था कि बुलावा ही नहीं आयेगा। वह अपने आप को इस स्थिति के लिए तैयार

करती रही। इसके अतिरिक्त और कौन-कौन सी कंपनियाँ हैं जहाँ वह आवेदन कर सकती है। कितने कम पैसों मे वह गुजारा कर सकती है। बड़ी कम्पनी यानी बड़ा पैसा यानी बड़ी प्रतियोगिता। उसके लिए कितनी गुंजाइश बचती है, वह हिसाब लगाती रही थी और अब, जब इन्टरव्यू में एक सप्ताह रह गया है, वह इस जुलूस में अपनी किस्मत जानने आयी है। तीन पत्ती मिली तो एयर टिकट बुक करवा लेगी।

सहसा उसकी नजर अपने दूसरी ओर आकर खड़ी हो गई बारह-तेरह साल की मोटी सी, जो शायद स्पैनिश थी, बच्ची पर पड़ी। उसके दोनों हाथ बैसाखियों पर टिके थे और चेहरे पर गहरी उदासी थी। पहला खयाल जो सुषमा के मन में आया वह यह था कि यदि यह

"सुषमा आगे बढ़कर

पहली लाइन में खड़े

बच्चों की पंक्ति के ठीक

पीछे आ गई। बस एक

तीन पत्ती, बाकी सब

कुछ वह उस बच्ची को

दे देगी। तीन पत्ती मिली

तो वह इन्टरव्यू के लिए

जायेगी वरना नहीं।

इतनी दूर बोस्टन जा🛚,

जब कि वहाँ बफ़ी पड़ रही

है, और अगर होना ही

नहीं है तो क्या जरूरत है

जहमत उठाने की।

सुषमा की कुर्सी की ठीक बगल में उस लड़की ने जगह ली। उसकी आँखें सुषमा से मिलीं लेकिन सुषमा की मुस्कुराहट के प्रत्युत्तर में वह स्त्री मुस्कुराई पर वह लड़की नहीं। सुषमा को एक अजीब सी बेचैनी महसूस हुई।

वह उसकी उदासी को समझ सकती थी। जहाँ आगे की लाइन में खड़े बच्चे उछल- उछलकर मालाएँ लूट रहे थे, खुशी से चिल्ला रहे थे, यह लड़की प्रस्तर-प्रतिमा सी अपनी बैसाखियों पर बस खड़ी थी। सुषमा को हैरत हुई कि क्यों नहीं इसकी माँ या अभिभाविका, जो भी यह औरत है, आगे बढ़कर कुछ बीड़्स, कुछ चाकलेट इसके

बैसाखियों पर न होती तो मोटापे की समस्या का इलाज करवा रही होती। पिज्जा खा-खाकर मोटे हुए माँ बाप बच्चों को असमय ही मोटापे की समस्या का शिकार बना देते हैं। लेकिन उसकी बगल में खड़ी स्त्री मोटी नहीं थी। सषमा की कर्सी की लिए बटोर लाती है। वह तो ऐसा कर ही सकती है। या कि इसे पीछे ही रोके रखने के लिए, कि यह भीड़ में अपनी और दुर्गति न कराए, वह पीछे खडी है?

जुलूस अपने चरम पर था। सारी चीजें अगली पंक्तियों में खड़े लोगों द्वारा लपक ली जातीं। अभी तक सुषमा तक कुछ नहीं पहुँचा था। और कुछ नहीं तो भी उसे एक तीन पत्ती तो चाहिए, सोचती हुई वह अपनी कुर्सी से उठ कर कुछ आगे बढ़ गई।

बस थोड़ा ही बढ़ी थी कि एक चाकलेट कैन्डी ठीक उसके पैरों के पास गिरी। वह कोई बच्ची तो नहीं, जो लालीपॉप खाए। उसने वह चाकलेट पीछे मुड़कर उस बच्ची की तरफ़ बढ़ा दी "दिस इज फ़ॉर यू।"

उस बच्ची के उदास चेहरे पर एक क्षीण मुस्कराह्ट बिजली की चमक-सी कौंधकर पल भर में विलीन हो गई।

सुषमा ने फ़िर जुलूस की तरफ़ नजर दौड़ाई। लगता नहीं कि उसके हिस्से में कुछ आनेवाला है। इस बार गुज़रती गाड़ियों में विज्ञापन ज्यादा है। शैमरॉक के डिजाइन ज्यादा हैं, लेकिन कुछ वैसा दर्शकों की तरफ़ नहीं आ रहा। लेकिन शायद यह भी सच नहीं था। छोटे से ट्रक पर बैठे दो बच्चों ने शैमरॉक के आकार के बैलून फ़ुलाए और एक-एक दोनों दिशाओं में दर्शकों की तरफ़ उछाल दिए। एक बच्चे और दूसरी ओर एक लम्बे आदमी द्वारा वे हवा में ही लपक लिए गए। सुषमा मायूस हो गई। बस इतना ही तो चाहिए था उसे फ़िर तो वह वापस हो लेती। क्या पता उसी तरह यह बच्ची भी कुछ

ऐसा ही सोचकर यहाँ आयी हो। उसने मुड्कर बच्ची की तरफ़ देखा। वह चेहरा भावहीन था। जैसे कोई उम्मीद कहीं बची ही न हो।

सुषमा आगे बढ़कर पहली लाइन में खड़े बच्चों की पंक्ति के ठीक पीछे आ गई। बस एक तीन पत्ती, बाकी सब कुछ वह उस बच्ची को दे देगी। तीन पत्ती मिली तो वह इन्टरव्यू के लिए जायेगी वरना नहीं। इतनी दूर बोस्टन जाओं, जब कि वहाँ बर्फ़ पड़ रही है, और अगर होना ही नहीं है तो क्या जरूरत है जहमत उठाने की ।

एक सुनहली माला उस तक आ कर गिरी। यह भी शुभ् शगुन है, उसने सोचा और फ़िर पीछे जाकर माला उस बच्ची को दे दी। यह उसकी पहली माला थी। उसने गले में डाल ली। अब तक अगली पंक्ति के बच्चे मालाओं से लद चुके थे। हरी, सुनहली, नीली, पीली, लाल, बैगनी हर रंग की मालाएँ। पालिथीन चाकलेटों से भरे।

विपरीत दिशा में देख रही, उसके पैरों से फ़िर कुछ टकराया। सफ़ेद मोतियों की माला।

इसे वह अपने लिए रखेगी।

पीछे खड़ी बच्ची के गले में अब दो मालाएँ थीं। एक उसके साथ की स्त्री ने उठाई थी।

अगली दो चाकलेट फ़िर सुषमा ने बच्ची को दे दी। वह फ़िर मुस्कराई। लेकिन थैंक्यू जैसा कोई शब्द उसके मुँह से नहीं निकला। शायद वह बाकी बच्चों से अपनी तुलना कर रही थी जो मालाओं, चाकलेटों और तरह के पैकेटों, टी शर्ट आदि से लदे फँदे खुशी से कूद रहे थे।

गाडियाँ गुज़रती रहीं। अब वे पीछे खड़े

लोगों को लक्ष्य कर रहे थे। बहुत कुछ पीछे भी पहुँच रहा था। सुषमा फ़िर से पीछे ह्ट आई थी और एक-एक कर कई मालाएँ वह बटोर चुकी थी। हर गाड़ी के गुज़रने के साथ उसकी मायूसी बढ़ती जा रही थी। कोई तीन पत्ती उसे नहीं मिलने वाली। हालाँकि ऐसी मालाएँ भी फ़ेंकी गई थीं जिनमें तीन पत्ती यानी शैमरॉक गुँथे हुए थे। उसमें से कुछ भी सुषमा तक नहीं पहुँचा था। एक घंटे के जुलूस का तीन चौथाई पार हो चुका था।

सुषमा को लौटना था।

सहसा बारिश शुरू हो गई। लोग भागने लगे। सुषमा ने अपनी मालाएँ गिनीं। एक में सिक्स फ़्लैग का कूपन था। दूसरे से फ़ूलों के आकार की सुगन्धित मोमबत्तियाँ लटक रही थीं एक कूपन के साथ कि वह अपनी मोमबत्ती इस दूकान पर आकर ले जाए। यानि कि जो उसे चाहिए था उसके सिवा बहुत कुछ मिल गया था उसे लेकिन उसके अन्दर का विश्वास जगाने के लिए कुछ नहीं। एक-एक कर सारी मालाएँ उसने गले में डाल लीं। उसने पीछे लौटते हुए देखा, उस बच्ची के गले में भी तकरीबन इतनी ही मालाएँ थीं, हालाँकि वह अपनी जगह से हिली भी नहीं थी, सिवाय एक बार के, जब एक पीली माला उन दोनों के बीच आ कर गिरी थी और सुषमा ने उससे कहा था "टेक इट" तब उसने झुक कर माला उठा ली थी।

चमकती हुई शीशे की मोतियों की मालाओं की तरह उस लड़की का चेहरा प्रसन्नता से चमक रहा था। मालाओं की चमक शायद अब उसके अन्दर भरने लगी थी। चेहरे पर शान्ति थी। वह मुस्करा रही थी।

सुषमा ने अपनी बाकी चाकलेट्स भी उसे दे दीं। इतने चाकलेटों का वह करेगी क्या। किसी पर शैमरॉक का चिह्न भी नहीं!.......

बच्ची ने पहली बार उसे "थैंक यू" कहा। शायद उसे उसका इच्छित सब कुछ मिल गया था!

भागते हुए लोगों में वह वृद्धा भी थी जिसने हरा चश्मा पहना था- शैमरॉक की डिजाइन का । "यह क्या... बारिश होने लगी।" वह सुषमा से अंग्रेजी में बोली।

"मैं भारतीय हूँ। हमारे यहाँ ऐसी हल्की बारिश को लोग शुभ मानते हैं" सुषमा ने कहा। "अच्छा!" वह वृद्धा प्रसन्नता से मुस्कराई।

"हाँ... आपको मानना चाहिए कि यह सेन्ट पैट्रिक्स डे हैप्पी होने वाला है।"

"हैप्पी सेन्ट पैट्रिक्स डे" वह हँसी।

कुछ हो न हो, सुषमा ने सोचा, उस वृद्धा का विश्वास उसने दुबारा जगा दिया है। अपनी मान्यताओं से जोड़कर। जबिक वह खुद इस बात में यकीन नहीं करती!

आकाश काले बादलों से भरता जा रहा था। वसंत का स्वागत करते पेड़ों में नई पत्तियाँ थीं लेकिन उनका घने छायादार स्वरूप में ढलना बाकी था कि कोई उनके नीचे खड़ा होकर खुद को बारिश से अंशत: ही सही, बचा सके। सुषमा और वह वृद्धा कुछ दूर तक साथ-साथ पार्किंग लाट में चलते रहे। काले आसमान के नीचे, सुषमा को उसकी दूधिया हँसी बहुत पवित्र सी लगी। उसे घर जाना था। बाकी बचे काम निबटाने थे। वह वृद्धा शायद कुछ और कहना चाहती थी लेकिन सुषमा आगे बढ़ ली।

नीचे हरा रंग अब भी सब तरफ़ फ़ैला था। भागते हुए लोग एक हरी दीवार की मानिन्द नजर आ रहे थे। बैसाखियों पर खड़ी लड़की अब भी गले में मालाएँ पहने शान्त भाव से खड़ी मुसकरा रही थी। शायद उन लोगों की कार आस-पास ही कहीं थी। सुषमा ने सोचा, जाने दो। इन्टरव्यू वह दे देगी। घर लौटकर पहला काम एयर टिकट बुक करना। फ़िर इंटरव्यू की तैयारी। आज का दिन तो बीत गया। एक दिन यात्रा का। तो बस पाँच दिन बचे हैं। ठीक से तैयारी करेगी। चयन हो न हो! जाने का खर्च तो कम्पनी दे ही रही है। और उसे क्या करना है। कड़ी प्रतियोगिता है इसीलिए साहस मरा हुआ है लेकिन यदि सफ़ल हुई तो बॉस्टन अच्छी जगह है। बड़ा पैसा भी है। चलो, छोड़ो, वह भी क्या अन्धविश्वास पाल रही है!

सहसा उसने महसूस किया कि बैसाखियों पर सिर्फ़ वह लड़की नहीं... वह खुद भी खड़ी थी और कई सारे अन्य लोग। फ़र्क इतना है कि आज उसकी बैसाखियाँ उतर गईं। वह मुक्त है...अपने पाँवों से चलने को स्वतंत्र!

-इला प्रसाद

### अनामिका सिंह

इन्दरगढ़ जिला कन्नौज (उत्तर प्रदेश) में जन्मीं, विज्ञान वर्ग से परास्नातक एवं उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में कार्यरत अनामिका सिंह कई साहित्यिक पत्रिकाओं सहित नवगीत पर एकाग्र साहित्यिक समूह 'वागर्थ' की सम्पादक/ संचालक हैं। नवगीत संग्रह 'न बहुरे लोक के दिन' प्रकाशित।

ईमेल - yanamika0081@gmail.com

## दो नवगीत

-अनामिका सिंह

1.

## रुढ़ियों की बेड़ियाँ

दूर तक छाया नहीं है, धूप है, पाँव नंगे राह में कीले गड़े

लोक-हित, चिंतन बना, साधन हमें खोदना है रेत में, गहरा कुआँ सप्तरंगी स्वप्न देखे आँख हर, दूर तक फैला कलुषता का धुआँ

कर रहे पाखण्ड प्रतिनिधि बैर के हैं ढहाने दुर्ग सदियों के गढ़े, दूर तक छाया नहीं...

रुढ़ियों की बेड़ियाँ मजबूत हैं भेड़ बनकर अनुकरण करते रहे, स्वर उठे कब हैं कड़े प्रतिरोध के जो उठे असमय वहीं मरते रहे

सोच पीढ़ी की हुयी है भोथरी, तर्क-चिंतन में हुए पीछे खड़े दूर तक छाया नहीं...

हो सतह समतल सभी के ही लिए



भेद न हो, वर्ग में अब न बँटें खोज लें समरस सभी निष्पत्तियाँ शाख रूखों से नहीं ऐसे छँटें

काट दें नाखून घातक सोच के चुभ रहे सद्भाव के बेढब बढ़े दूर तक छाया नहीं...

2.

## अम्मा की सुध आई

शाम-सबेरे शगुन मनाती खुशियों की परछाई अम्मा की सुध आई

बड़े सबेरे उठी बुहारे कचरा कोने-कोने पलक झपकते भर देती थी नित्य भूख को दोने

जिसने बचे खुचे से अक्सर अपनी भूख मिटाई अम्मा की सुध आई तुलसी चौरे पर मंगल के रोज चढ़ाए लोटे चढ़ बैठीं जा उसकी खुशियाँ जाने किस परकोटे

किया गौर कब आँखों में थी जमी पीर की काई अम्मा की सुध आई

पूस कटा जो बुने रात-दिन दो हाथों ने फंदे आठ पहर हर बोझ उठाया थके नहीं वो कंधे

एक इकाई ने कुनबे की जोड़े रखी दहाई अम्मा की सुध आई

बाँधे रखती थी कोंछे हर समाधान की चाबी बनी रही उसके होने से बाखर द्वार नवाबी

अपढ़ बाँचती मौन पढ़ी थी जाने कौन पढ़ाई अम्मा की सुध आई

-अनामिका सिंह

### ऋचा जैन

जबलपुर, मध्य प्रदेश में जन्मीं और वर्तमान में लंदन में रह रहीं तकनीकी विशेषज्ञ ऋचा जैन हिन्दी शिक्षिका के रूप में कार्यरत हैं। कविता, बाल साहित्य, संस्मरण, ग़ज़ल विधा में लेखन। बच्चों की किताब 'श्पास मिट एली उंड एजी' सहित एक काव्य-संग्रह प्रकाशित। काव्य संग्रह जीवन वृत्त, व्यास ऋचाएँ भारतीय उच्चायोग लंदन से लक्ष्मीमल सिंघवी अनुदान योजना के तहत सम्मानित।



ईमेल - richa287@yahoo.com

## ऋचा जैन की दो कविताएँ

#### -ऋचा जैन

### 01.

मैं राधा ही तो हूँ यूँ गलबहियाँ डाले रहोगी तो तान कैसे लूँगा, राधा नहीं पता, कान्हा पर तान के संग तेरे हृदय के कम्पन और श्वासों की आवाजाही ना गयी मेरे कानों में तो वो तान अधूरी है रे मेरे लिए कृष्ण ने राधा को अपने और समीप खींचा अंकपाश कसा साँसें भरीं और छोड़ दीं बंसी में दिशाएँ मोहिनी से बँध गयीं तभी धरा पर एक कदम्ब का फूल गिरा उसके कम्पन से जमुना के जल में हलचल हुई उस हलचल में काल बीत गये जल वाष्प हुआ और फिर वर्षा

वर्षा जल, और फिर वाष्प जल बस अभी-अभी बदला था बाड़े के बड़े घर के छप्पर से झरती उरबतियों में किवाड़ से टिकी बाइक से टपकी पेट्रोल की बूंद डामर के पथ पर इंद्रधनुष बना रही थी सौंधाई सी वायु मंद-मंद अचल माउथ ऑर्गन अब भी कान्हा के अधरों पर था दिशाएँ अब भी स्थिर - प्रेमपाश में जकड़ी हुईं उसने एक क्षण को आँखें खोलीं जैसे तथागत खोलते हैं ज्ञानोदय के बाद कान्हा को अनिमेष निहारा और फिर लीन हो गयी

### 02.

प्रिय पुत्री अगर देखना ही चाहोगी मेरे पदचिन्ह, मेरी बेटी, तो देखना उनमें ध्यान से

आँखें भी हैं और अबके ढूँढना मत टेलिस्कोप से किसी ध्रुव तारे को बल्कि देखना घास पर लेटकर मुक्त आँखों से जगह फेरते अनाम तारे, और उनकी कम-ज़्यादा होती टिमटिमाहट अगर देखना ही चाहोगी मेरे पदचिन्ह तो सुनना ध्यान से उनमें कान भी हैं और अबके छोड़ देना गंतव्य को और सुनना सारी बातें यायावरी की जो देखना ही चाहोगी मेरे पदचिन्ह तो सूँघना ध्यान से कुछ गंध भी होंगीं उनमें गहरे खींचना और पहचानना हवा, पानी, हँसी और स्वछंदता जो देखना ही चाहोगी मेरे पदचिन्ह तो देखना मत कि कहाँ तक, किस राह, कितने सुडौल या कितने बड़े वरन देखना, कहाँ ठिठक हो गए थे खड़े किन दरवाजों को रहे तकते वहाँ, बस वहाँ रुक जाना । और अबके न करना अनसुना हृदय के भीतरी कमरों से आते उन मद्धम आभासों को खटखटाना उन दरवाज़ों को जो देखना ही चाहोगी, मेरी बेटी, मेरे पदचिन्ह तो देखना, सुनना, सूँघना, समझना, और चिह्नित करना नये

स्वयं के.



### किंशुक गुप्ता

कैथल, हरियाणा में जन्में और वर्तमान में दिल्ली में रह रहे किंशुक गुप्ता, मौलाना आज़ाद मेडिकल कॉलेज में पढ़ाई के साथ-साथ कविता, हाइकु, लघुकथा विधा में लेखन कर रहे हैं। एक कहानी संग्रह प्रकाशित। कई संस्थानों से पुरस्कृत/सम्मानित।



ईमेल - kinshuksameer@gmail.com

## हमारे हिस्से के आधे-अधूरे चाँद

### -किंशुक गुप्ता

"डॉक्टर अंकल के ल्यूकेमिया बोलते ही माँ गाय की तरह रिरियाने लगती है। पापा अचानक मोम का पुतला हो जाते हैं। और रोमू भैया तो मम्मी-पापा का ध्यान हटते ही मुझे बाथरूम में बंद कर देते हैं। गलती से रोने की आवाज़ निकल जाए, तो लाइट भी बंद कर देते हैं। कभी पानी के टप-टप टपकने की आवाज़। कभी चप्पलों-जूतों, बर्तन पटकने की आवाज़…"

डॉक्टर अंकल की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि मम्मी ने झटाक से अपना हाथ वहाँ की काँच की टेबल पर दे मारा।

चूड़ियों के टुकड़े किरच-किरच कर बिखर गए। कुछ टुकड़े हम सबकी ओर उड़ते आए पर चुभे केवल माँ को। खून से

लथपथ उनका हाथ टमाटर जितना लाल हो गया। फिर वह दहाड़ मारकर रोने लगीं।

'कैसा फूटा हुआ भाग बक्शा है भगवान?' मम्मी ने ऊपर देखते हुए कहा।

पापा, रोमू भैया और मम्मी मेरी ओर देखने लगे। मुझे लगा मैंने कोई गलती कर दी है। फिर पापा ने मुझे अपनी गोदी में बिठाकर मेरा हाथ कसकर पकड़ लिया। डॉक्टर अंकल के ल्यूकेमिया बोलते ही माँ गाय की तरह रिरियाने लगती है। पापा अचानक मोम का पुतला हो जाते हैं।

और रोमू भैया तो मम्मी-पापा का ध्यान हटते ही मुझे बाथरूम में बंद कर देते हैं। गलती से रोने की आवाज़ निकल जाए,

तो लाइट भी बंद कर देते हैं। कभी पानी के टप-टप टपकने की आवाज़। कभी चप्पलों-जूतों, बर्तन पटकने की आवाज़।

मम्मी के सुबकने, पापा की उन पर

गरजने की आवाज़। बाहर से आती रोमू भैया की भारी, भूतिया आवाज़ ... मैं आ रहा

हूँ। लेकिन भूत आता नहीं।

अम्मा, प्लीज़ एक बार बता दो भूत तक पहुँचने का रास्ता। मैं चुपचाप रोमू भैया की साइकिल लेकर दोपहर को उसके

पास चला जाऊँगा। मैं तो खुद चाहता हूँ मुझे कोई खा जाए... क्या भूत भी सिर्फ सुंदर इंसानों को खाते हैं?

पूरा दिन खिड़की के सामने बैठा रहा। रोहित, महेश, मृदुल, प्रज्ञा, महिका मिलकर आइस-वॉटर खेल रहे थे। उनके मुस्कुराते चेहरे देखकर मैं भी हँसने लगता हूँ।

मेरा भी मन होता है उनके साथ खेलने का पर मम्मी पूछते ही आँख दिखाती हैं।

पूरा दिन घर पर बैठा-बैठा बोर हो जाता हूँ। फिर कभी मम्मी के साथ ही आईस-वॉटर खेलने लगता हूँ। पर मम्मी आईस

होती नहीं। तंग मत कर... जैसा कुछ खीझा हुआ वाक्य दोहराती रसोई की ओर हो लेती है। शायद मम्मी आईस का

मतलब नहीं जानती। अगली बार मैं उन्हें बर्फ़ बोलकर देखूँगा।

रोमू भैया तो जब उनका मन करता है काला चश्मा पहने एक्टिवा पर निकल पड़ते हैं। वो भी बिना हेल्मेट के। मैं उन्हें

याद दिलाने की कोशिश भी करता हूँ पर इंजन की गड़गड़ाहट में मेरी आवाज़ दब जाती है।

जैसे उस दिन वो दस-दस-दस चिल्लाने वाला लड़का दब गया था दो गाड़ियों के बीच। गाँधी मार्किट जाने के लिए जब भी मैं और मम्मी शंकर रोड से निकलते, वो लड़का दस-दस-दस चिल्ला रहा होता। जैसे वही उसका नाम हो। वही धूल से

भरी कमीज़, हल्दी के दाग, यहाँ-वहाँ से कटी-फटी—जैसे वो आईस हो, और सारी दुनिया वॉटर।

हम चींटियों की तरह आड़ी-तिरछी रेखाएँ बनाते रेडलाइट पर गाड़ियों के बीच से निकल रहे थे। दस-दस-दस एक लाल

ऑल्टो की खिड़की से अपना हाथ अंदर बढ़ाकर हाथी वाले चाभी के छल्ले बेच रहा था। तभी बत्ती हरी हो गई और ऑल्टो

के सौ रुपए उसके हाथ में ही रह गए। तब वो चेंज चेंज चेंज चिल्लाता हुआ भागा था और ट्रक के नीचे आ गया था। मुझे

लगा था कार्टून की तरह पिच्च से खून निकेलगा। कोई आवाज़ होगी। उन छीटों से सबकी सफेद कमीज़ भर जाएगी।

बिल्कुल वैसे ही जैसे मम्मी के उस सीरियल में होता है। पर वहाँ तो वैसा कुछ भी नहीं हुआ।

मैं उसके पास जाने लगा तो मम्मी ने मेरा हाथ ऐसे पकड़ लिया जैसे तब पकड़ती हैं जब मैं टॉमी को तंग कर रहा होता हूँ।

एकदम सख्त।

उन्होंने कहा—सामने देखकर चला करो। मैं पीछे मुड़-मुड़कर देखता रहा था पर कोई नहीं रुका था, मक्खियों के अलावा। जैसे वह कोई चींटी हो। नहीं, उससे भी कुछ छोटा शायद। क्योंकि मुझे तो फर्श पर चींटी दिखती है। या सबकी आँखे एक साथ खराब हो गईं थीं?

मम्मी मुझे लगभग घसीटती हुई वहाँ से ले गई थी। मैंने पूछना चाहा था कि उस लड़के को बहुत दर्द तो नहीं हो रहा

होगा? पर वो फिर चिल्ला क्यों नहीं रहा? क्या वो इतना ब्रेव ब्वॉय है?

तब मम्मी ने मुझे दो चॉकलेट आईसक्रीम कोन लेकर दिए और मैं सबकुछ भूल गया।

इंग्लिश वाली मोनिका मैम मुझे सबसे अच्छी लगती हैं। वो मुझे बाकी बच्चों की तरह ही ट्रीट करती हैं। बहुत प्यार करती

हैं, तो गलती करने पर डॉंट भी देती हैं। बाकी सब मैम शरारत करने पर 'कोई बात नहीं... बेचारा...' कहकर छोड़ देती हैं।

जैसे उनके लिए मैं क्लास में हूँ ही नहीं। अम्मा पूरे दिन मेरे पास रहती हैं। हर रोज़ फूल पत्ती वाली साड़ी पहने अम्मा सुबह यहाँ पहुँच जाती हैं। माथे पर एक

बड़ी सी बिंदी। बालों के बीच में लाल रंग की बड़ी-सी लकीर लगाए रखती हैं। (क्या कहते हैं उसे सिन् सिन् सिन्...उन्होंने

परसों ही तो बताया था...अरे हाँ याद आया... सिंदूर!)

अम्मा हर बात पर हे राम! हे राम! की रट लगाए रहती है। मुझे कहती है, 'सुआ, अगर हर रात एक घंटा ईश्वर के सामने

हाथ जोड़ोगे, तो तुम शर्तिया ठीक हो जाओगे।'

'मंदिर में तो शिव जी भी हैं और दुर्गा जी

भी हैं...किसके सामने?'

'शिव जी के सामने... वो त्रिदेव में से एक हैं... और मृत्यु के भगवान हैं।'

'त्रिदेव मतलब?'

'ब्रह्मा, विष्णु, शिव... जो तीनों इस संसार को चला रहे हैं।'

'दुर्गा माँ क्यों नहीं चलाती संसार को?' 'वो शिव जी के साथ मिलकर चलाती हैं।'

'तब उनका नाम त्रिदेव में क्यों नहीं है?' 'अब हर सवाल का अगर मगर होता है क्या? कुछ नियम होते हैं जिन्हें आँखें बंद कर मान लेना होता है। क्यों, क्या, कैसे

जोड़कर देखने लगे तो सब गड़बड़ नहीं हो जाएगा?'

'पर मौत क्या होती है?'

'अब बस... और कोई सवाल नहीं...'

ऊँ त्रयंबकम यजामहे सुगंधिम पुष्टि... आगे फिर भूल गया। अम्मा हर रोज़ याद करवाती है, पर रात तक मैं भूल जाता हूँ।

मैंने मम्मी को देखा है वो भी भूल जाती हैं तो गोद में रखी किताब से चुपचाप चीटिंग कर लेती हैं।

कभी तो बैठे-बैठे ही सो जाती हैं। तब मैं चुपचाप उनकी गर्दन पर अपनी अँगुली चींटी की तरह चलाने लगता हूँ।

कौन है, कौन है कहती मम्मी फिर अचानक मंत्र बुदबुदाने लगती हैं। मैं खिलखिलाकर हँसता हूँ।

रोमू भैया और शोमा दीदी ने जामुन के पेड़ के पीछे एक-दूसरे को गले लगाया है।

रोमू भैया ... 'तुम अपने पापा से एक बार फिर बात करोगी?'

शोमा दीदी ... 'वो नहीं मानेंगे शादी के लिए। वो डरते हैं कि तुम्हारे भाई का बोझ मुझ पर पड़ जाएगा।'

रोमू भैया ... 'अभी तो बहुत समय तक माँ-पापा हैं ही। उसके बाद साथ मिलकर कुछ

सोच लेंगे'

शोमा दीदी 'पापा अड़े हुए हैं। इसलिए जल्दबाज़ी में रिश्ता कहीं और कर देना चाहते हैं।'

बेचारगी से घास पर रोमू भैया औंधे लेट जाते हैं। रोने लगते हैं। उनकी आँखें लाल पड जाती हैं। मेरे कमरे की ओर इशारा

करते हुए लगभग चींख पडते हैं...

'कब तक मुझे इसके कारण सजा भुगतनी होगी? जब से यह पैदा हुआ है मैं तो घर में इनविज़िबल ही हो गया हूँ। सारा घर

'आदी आदी' करता रहता है। आदी के लिए ये,

आदी के लिए वो। उसके इलाज में पैसे चाहिए तो अच्छे स्कूल में मत जाओ।

अच्छे कपड़े मत खरीदो। दोस्तों को घर मत बुलाओ

अब उसके कारण क्या मुझसे प्यार करने

का अधिकार भी छीन लिया जाएगा?' क्यारी में लगा गेंदे का फूल खिड़की से होता हुआ मेरी तरफ बढ़ रहा है।

क्या मैं उसे तोड़कर मम्मी को दे आऊँ? नहीं, नहीं, मैं इसे नहीं तोडूँगा। कोई तो है जो मुझे देखकर अपना मुँह नहीं बिचकाता। रोमू भैया ने नहाने के लिए चार दिन बाद

पूछा।

"ऊँ त्रयंबकम यजामहे

सुगंधिम पुष्टि... आगे फिर

भूल गया। अम्मा हर रोज़

याद करवाती है, पर रात

तक मैं भूल जाता हूँ। मैंने

मम्मी को देखा है वो भी

भूल जाती हैं तो गोद में रखी

किताब से चुपचाप चीटिंग

कर लेती हैं। कभी तो बैठे-

बैठे ही सो जाती हैं। तब मैं

चुपचाप उनकी गर्दन पर

अपनी अँगुली चींटी की

तरह चलाने लगता हूँ। कौन

है, कौन है कहती मम्मी

फिर अचानक मंत्र बुदबुदाने

लगती हैं। मैं खिलखिलाकर

हँसता हूँ।

में तुरंत दौड़ कर उनके पास भागा। मेरे छूने पर वो दूर हट गए।

पिछले एक महीने से वही नहला रहे हैं। तब से जब अचानक मैं नहाते हुए चक्कर खाकर गिर पड़ा था। मेरा सिर टूँटी में जा

लगा था। फर्श पर गिरा हुआ मुझे लग रहा था कि मेरे सिर से कुछ गर्म बह रहा है। मैंने उस जगह हाथ फिराया तो मेरा

हाथ खून से सन गया। मैं मम्मी को बुलाना चाहता था पर तभी बेहोश हो गया।

मुझे होश हस्पताल में आया। वहाँ सब बूढ़े-बूढ़े लोग थे। एक अंकल के तो दोनों पैर ऊपर उठे हुए थे। जैसे जादुई

> कालीन पर बैठे हों। तभी डॉक्टर ने ल्यूकेमिया... ल्यूकेमिया

की रट लगाई थी।

भैया इतनी ज़ोर से पानी डालते हैं की मग्गे से आती धार ऐसी लगती है मानो कोई तमाचा मार रहा हो।

मैं उनसे पानी धीरे डालने के लिए कहता हूँ।

वो और ज़ोर से पानी डालने लगते हैं। शाम को जब अम्मा आईं तो हर रोज़ की तरह संतरे की गोली लेकर आईं। मैं आज भी उनसे पूछता हूँ, 'तुमने किसी से

पूछा ल्यूकेमिया क्या होता है?'

'लकेमिया, लुकिमिया, दिन भर क्या रट लगाए रखते हो?'

वैसे ल्-यू-के-मि-या बोलने में कितना मज़ा आता है।

सपने में मैं एक डॉक्टर था। सफेद कोट पहने। गले में स्टेथोस्कोप लगाए। मेरे छूते ही हर मरीज़ ठीक हो रहा था। अब तो

सोच लिया है मैं बड़े होकर डॉक्टर बनूँगा।

पर पापा की तरह सुंदर कविताएँ भी तो लिखनी है...

और मम्मी की तरह रूमाल पर रंग-बिरंगे फूल भी तो बनाने हैं...

पर मेरी तो ड्रॉइंग भी अच्छी है... मोहिनी मैम कितने सारे गुड, वेरी गुड देती हैं...

एक चीज़ चुनना तो मुश्किल है। मैं तो सब कुछ बनूँगा।

पापा ने इसी डायरी की शुरूआत में लिखा है—

"खम ठोक ठेलता है जब नर,

पर्वत के जाते पाँव उखड़, मानव जब ज़ोर लगाता है, पत्थर पानी बन जाता है।

शाम को जब खिड़की से आती धूप से बहुत सारे चौकोर बन रहे थे, पापा मेरे पास आकर देर तक बैठे रहे। उन्होंने मुझे उस

तरफ बिठाया जहाँ से धूप मेरे शरीर के आधे हिस्से पर पड़ती रहे। उन्होंने यह कविता पढ़कर सुनाई। दोहराई। उनकी

आवाज़ में जादू है। मैं चाहता हूँ कि वो बस मुझे कुछ सुनाते रहें।

फिर अचानक सूरज ढल गया। मेरा आधा शरीर ओझल हो गया।

पापा ने मेरे सिर पर हाथ रखा—अभी तुम्हें भी बहुत लड़ना है, मेरे बच्चे!

> लेकिन किससे, पापा? अस्पताल से रिपोर्ट आई है। कौन-सी रिपोर्ट लेकिन?

मैं अपने कमरे से चुपचाप सुनता हूँ। पापा मेरा नाम ले रहे हैं। कह रहे हैं, 'रोमित का मैरो मैच हो गया है... मैरो क्या होता

है?'

रोमू भैया सामने रखी पापा की काँच की ट्रॉफी ज़मीन में दे मारते हैं।

मैं जल्दी से बिस्तर के नीचे छुप जाता हूँ। कहीं रोमू भैया फिर मुझे बाथरूम में बंद न कर दें।

आकाश में एक डफली बज रही है। छमाछम बारिश हो रही है। आलू-प्याज़ की पकौड़ी खाने का मन है।

अम्मा जल्दी से मानती नहीं, पर मैं उसके

गाल खींचता हूँ, प्लीज़ प्लीज़ कहता हूँ, तो वो बनाने लगती है।

अम्मा अपने दोनों हाथ बेसन में सान लेती है, तो मैं चुपचाप अंगुली से उसके चेहरे पर बेसन लगा देता हूँ।

वो मुझे आँख दिखाती है, तो मैं वहाँ से भाग खड़ा होता हूँ, 'पकड़ के दिखाओ।'

अंत में पकौड़े की प्लेट लेकर आती है तो मैं उनकी नाक को देखकर कहता हूँ, 'एक पकौड़ा तो यह भी है। सबसे पहले इसे

खाया जाए...'

मम्मी बगीचे में बैठी है। गर्दन झुकी हुई। पसीने से तर... बाल पूरे चेहरे पर छितरे हुए। वो पड़ोस वाली रमा आँटी से कह रही हैं—

"या तो अब ये बिल्कुल ठीक हो जाए या हमारी मुक्ति हो जाए!"

'रोमित पराशर के नाम से कोई चिट्ठी आई है।' दरवाजे से आवाज़ आती है।

कहीं यह कुछ मैरो से जुड़ा तो नहीं। कहीं फिर तो रोमू भैया गुस्सा होकर चीज़ें तोड़ने-फोड़ने नहीं लगेंगे?

पर वह तो उसे जैसे ही खोलते हैं, खुशी से कूद पड़ते हैं। चिल्ला-चिल्ला कर सबको बताते हैं, 'हार्वर्ड कॉलेज में मुझे

एडमिशन मिल गया!'

मम्मी के चेहरे पर गेंदे जैसी मुस्कान मैंने पहले कभी नहीं देखी। मैं कमरे से बाहर निकलने लगता हूँ फिर ठिठक जाता हूँ।

मम्मी और वो फिर चिट्ठी आगे पढ़ते हैं

और धम्म से बिस्तर पर बैठ जाते हैं।

लेकिन सिर्फ पच्चीस परसेंट स्कॉलरशिप मिली है, मम्मी। उनके मुँह से ऐसे निकलता है जैसे फेल होने पर नोबीता कहता

है।

पापा रविवार का अख़बार दिखा रहे हैं। उसमें उनकी पहली बार कविता छपी है। उनकी आँखें बिल्कुल वैसे ही चमक रही

हैं जैसे मेरी ये अँगूठी जो मम्मी ने कुछ दिनों पहले ही उस भभूत वाले बाबा से लाकर दी है, धूप में चमचमाने लगती

है।

वो रसोई में खड़े माँ को कविता पढ़कर सुना रहे हैं। पापा की आवाज़ में कुछ अलग है। उनकी आँखों से अचानक ही आँसू

> भी टपकने लगे हैं (पापा क्यों रो रहे हैं?) 'तुम्हारे होने का एहसास…'

वो आगे सुनाने को होते हैं जब मम्मी रोक कर कहती हैं, 'तुमने बिजली का बिल भर दिया न?'

पापा का चेहरा अचानक लाल हो जाता है। दाँत किटकिटाते हुए वह अख़बार को बीच में से फाड देते हैं।

पिछली रात मम्मी, पापा और रोमू भैया एक-दूसरे पर ज़ोर से चिल्लाते रहे। मैं थोड़ा बड़ा होता तो मुझे उनकी बातें

समझ में आ जातीं।

सुबह घर में खाना नहीं बना। लड़ाई का दूसरा दौर चला। मैंने आज उनकी बातें ध्यान से

3

सुनी।

पापा... 'आदी का इलाज़ कराना इस समय सबसे ज़रुरी है।

मम्मी... 'तुम्हें याद नहीं डॉक्टर की बात... मैरो के बाद भी बचने के चाँसेंस बहुत कम हैं। उसे बचाकर हम करेंगे भी क्या?'

पापा... 'लेकिन हम उम्मीद कैसे छोड

"मैं जल्दी से बिस्तर के

नीचे छुप जाता हूँ। कहीं रोमू

भैयाँ फिर मुझें बाथरूम

में बंद न कर दें। आकाश

में एक डफली बज रही है।

छमाछम बारिश हो रही है।

आलू-प्याज़ की पकौड़ी

खाने का मन है। अम्मा

जल्दी से मानती नहीं, पर

मैं उसके गाल खींचता हूँ,

प्लीज़ प्लीज़ कहता हूँ, तो वो

बनाने लगती है।

सकते हैं ? मेरे लिए दोनों बच्चे समान हैं।'

मम्मी 'ये नारेबाज़ी तब करते जब जेब में दोनों के लायक पैसे होते।'

पापा दखाज़ा भाड़ से मारकर चले जाते हैं। फिर मम्मी घूरकर मेरे कमरे की तरफ देखती है। मैं पर्दे की ओट में छुप जाता

हूं।

लँगडे 'उस का डलाज़ इतना ज़रुरी है तो किसी से रुपए उधार क्यों नहीं ले लेते' रोमू भैया रोने लगते हैं।

मम्मी उन्हें पुचकारती हैं। उनके सिर पर हाथ फेरती हैं। फिर मम्मी उनसे कहती है, 'सिर्फ एक ही तरीका है तुम मैरो

डोनेट करने से मना कर दो।'

'पर अगर उसे कुछ हो गया तो?' रोमू भैया और ज़ोर से रोने लगते हैं।

बेटा अब दोनों चीज़ें तो पॉसिबल नहीं। थोड़े प्रैक्टिकल बनो।

क्या वो मेरे बारे में बात कर रहे हैं? या मेरे नाम के किसी और लड़के की?

ऐसी कौन-सी बीमारी है जिससे घर पर झगडा होने लगता है?

रोमू भैया अगर घर पर हों तो वही टी.वी. देखते हैं। मेरा डोरेमॉन फटाक से बदल देते हैं। चेहरा मसोस कर कहते हैं, 'ये सब बेकार

> की बातें हैं। निरी कल्पना है। अपने आसपास की दीन दुनिया की खबर रखना

है।'

इससे ज़्यादा ज़रुरी

ज़रुरी तो नहीं कि उनका 'जरुरी' और मेरा 'ज़रुरी' एक ही हो? मैं पूछने को होता हूँ पर तब तक वह न्यूज़ चैनल चला

देते हैं। वहाँ कोई लाल लिपस्टिक वाली गोरी मेम कुछ-कुछ बोलती है। अक्सर तो मैं भाग जाता हूँ पर कई बार रोमू

भैया कस कर दबोच लेते हैं। तब सुनना पड़ता है—

बॉलीवुड अभिनेत्री सुकन्या महाजन के लव दोबारा के सेट पर लड़े सुकेतु गुप्ता से नयन। रात के अँधेरे में पत्नी ने पति की प्रेमिका का दबा दिया गला।

गिर के जंगलों में एक मादा हाथी ने दिया चार बच्चों को जन्म; गुजरात के मुख्यमंत्री ने नए रिकॉर्ड की जताई खुशी।

रोमू और आदी गेंद की तरह मम्मी-पापा की जीभों पर फिर उछलते रहे।

आजकल मेरा सिर बहुत भारी रहने लगा है। हर समय उबकाई। भूख बिल्कुल नहीं लगती। ज़रा-सा खडा होते ही थक

जाता हूँ। लिखने की भी इच्छा नहीं होती।

मैंने अम्मा से पूछा कि मुझे क्या हुआ है?

अम्मा ने मुझे कसकर गले लगाया। 'तू थोड़े दिनों में इससे बेहतर दुनिया में जाने वाला है। वहाँ तुझे इनसे बहुत अच्छे माँ-

बाप मिलेंगे।'

मुझे अच्छा नहीं लगा कि उन्होंने माँ-बाप कहते हुए यूँ मुँह बिचकाया।

मैंने उनकी पकड़ से अपने को अलग किया और दोनों हाथ कमर पर रखकर तन कर रहा, 'मेरे मम्मी-पापा सबसे अच्छे हैं।'

दर्द के इंजेक्शन के बिना तो एक पल भी रहना मुश्किल है। असर खत्म होते ही मैं पैर पटकने लगता हूँ।

बिस्तर पर पड़ा ही रहता हूँ। सूसू, पॉटी, खाना सब बिस्तर पर।

मम्मी कहती है कि मेरे कमरे में एक बदबू बस गई है जिससे उन्हें उबकाई आती है।

अम्मा के अलावा अब मेरे नज़दीक कोई नहीं आता।

पेंसिल पकड़ते ही इतना दर्द हुआ मानों सारी हड्डियाँ चूर-चूर हो गईं।

लगता है कि जैसे स्ट्रॉ से कोई मेरी जान खींच रहा है। फिर भी आज लिखना ज़रूरी है। रोमू भैया किसी बहुत बड़ी जगह
पढ़ने जा रहे हैं।
इतने दिनों के बाद उन्हें देखा। वो देर
तक मुझे अपने गले से लगाए रोते रहे।
मैंने उन्हें बोला, 'ऑल द बेस्ट।'
वो चले गए। लेकिन कुछ मिनटों बाद
फिर लौटकर आए। उनके पीछे मम्मी और पापा
भी। हम चारों ने एक-दूसरे को
पकड लिया और देर तक रोते रहे।

-किंशुक गुप्ता

### त्रिलोक सिंह ठकुरेला

नगला मिश्रिया, जिला अलीगढ़ में जन्में त्रिलोक सिंह ठकुरेला भारतीय रेलवे में इंजीनियर हैं। लघुकथा, नवगीत, हाइकु, कुंडलिया, गीत, मुकरी आदि विधाओं एवं बालसाहित्य की मौलिक/संपादित कुल ग्यारह पुस्तकें प्रकाशित। कई रचनाएँ पाठ्यक्रम में शामिल, राजस्थान साहित्य अकादमी सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित/ पुरस्कृत।



ईमेल - trilokthakurela@gmail.com

## पिताजी

### -त्रिलोक सिंह ठकुरेला

पिताजी एक माह से बीमार थे। उनके व माँ के कई बार फोन आ चुके थे, किन्तु मैं गाँव नहीं जा पाया। सच कहूँ तो मैं छुट्टियाँ बचाने के मूड में था। उमा का सुझाव था- ''बुखार ही तो है, कोई गम्भीर बात तो है नहीं। दो माह बाद दीपावली है, तब जाना ही है। अब जाकर क्या करोगे। सब जानते हैं कि हम सौ किलोमीटर दूर रहते हैं। बार-बार किराया खर्च करने में कौन सी समझदारी है।''

एक दिन माँ का फिर फोन आया। माँ गुस्से में थी- ''तेरे पिताजी बीमार हैं और तुझे आने तक की फुर्सत नहीं। वह बहुत नाराज हैं तुझसे, कह रहे थे कि अब तुझसे कभी बात नहीं करेंगे।''

उसी दिन ड्यूटी जाते समय मुझे ऑटो रिक्शा ने टक्कर मार दी। मेरे बायें पैर पर प्लास्टर चढ़ाना पड़ा। उमा ने माँ को फोन कर दिया था। दो घंटे में ही पिताजी हॉस्पिटल में आ पहुँचे। वह बीमारी की वजह से बहुत कमजोर किन्तु दृढ थे। मुझे सांत्वना देते हुए बोले- ''किसी तरह की चिंता मत करना। थोड़े दिनों की परेशानी है, तू जल्दी ही ठीक हो जायेगा।"

उन्होंने मुझे दस हजार रुपये थमाते हुए कहा, ''रख ले, काम आयेंगे।''

मैं क्या बोलता... मुझे स्वयं के व्यवहार पर शर्म आ रही थी।

जीवन के झंझावात में पिताजी किसी विशाल चट्टान की तरह मेरे साथ खड़े थे।

## मौन

### -त्रिलोक सिंह ठकुरेला

रघुराज सिंह बहुत खुश थे। उनके लड़के से अपनी लड़की का रिश्ता करने की इच्छा से अजमेर से एक संपन्न एवं सुसंस्कृत परिवार आया था। रघुराज सिंह का लड़का सेना में अधिकारी है। उनके तीन अन्य लड़के उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

लड़की के पिता ने रघुराज सिंह से कहा, ''हम आपसे एवं आपके परिवार से पूरी तरह संतुष्ट हैं। आप भी हमारी लड़की को देख लें एवं हमारे परिवार के बारे में पूरी जानकारी कर लें।''

रघुराज सिंह ने कहा, ''जानकारी लेने की कोई जरूरत नहीं है। हम भी आपसे पूरी तरह संतुष्ट है।''

लड़की के पिता ने पूछा, ''आपकी कोई मांग हो तो हमें बताने की कृपा करें।''

रघुराज सिंह बोले, ''हमारी कोई मांग नहीं है। बस, चाहते हैं, लड़की ऐसी हो जो परिवार में विघटन न कराये। चाहता हूँ, चारों भाई मिलकर रहें।'' ''इससे बढ़कर क्या बात हो सकती है। जब बच्चों को अच्छे संस्कार मिलते हैं तो पूरा परिवार एक सूत्र में बँधा रहता है।''

लड़की के पिता ने विनम्रतापूर्वक कहते हुए पूछा-

''साहब, आप कितने भाई हैं? '' रघुराज सिंह ने कहा, ''सात भाई, एक बहिन''

लड़की के पिता ने पूछा, ''आपके भाई क्या करते हैं?''

रघुराज सिंह, ''सबके निजी धंधे हैं।'' लड़की के पिता ने पूछा, ''आपने अपने किसी भाई को बुलवाया नहीं?''

रघुराज सिंह झिझकते हुए बोले, ''अजी, हम भाइयों में बोलचाल बंद है।''

अचानक वहाँ खामोशी छा गयी... प्रश्न और उत्तर दोनों ही मौन थे।

#### जय चक्रवर्ती

कन्नौज (उ.प्र.) के कीरतपुर गाँव में जन्में जय चक्रवर्ती सुप्रसिद्ध साहित्यकार हैं, गीत, नवगीत, समकालीन हिन्दी गजल एवं दोहे की आठ किताबें प्रकाशित, देश की अधिकांश साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन. भारत सरकार के प्रतिष्ठित सार्वजनिक उपक्रम आई.टी.आई. लिमि. से वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी के पद से स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति के पश्चात स्वतंत्र लेखन.



ईमेल - jai.chakrawarti@gmail.com

## जय चक्रवर्ती की 5 गजलें

#### -जय चक्रवर्ती

_	
п	
	٠

मिलते हो बस आते-जाते, काश! कभी घर पर भी आते.

कुछ अपनी कुछ इसकी-उसकी, कह-सुनकर दिल को बहलाते.

बतियाते कुछ दीवारों से, जी उठते कुछ रिश्ते-नाते.

तुम हँसते तो साथ तुम्हारे, एक हँसी हम भी जी पाते.

एक तुम्हारे होने-भर से, जाने कितने गम खो जाते.

मैं तुममें, तुम मुझमें खोकर, हम तुम और तुम हम हो जाते.

एक अकेलेपन से हम-तुम, मिलकर लड़ते और हराते. 2.

तुम हो तो ये घर-सा घर है, घर में अपनेपन का स्वर है.

घर की हर चिंता, हर पीड़ा, ली तुमने अपने सर पर है.

हँसकर दुख जीने का अवसर,

अक्सर कहता रहता हूँ मैं, घर में मेरे जादूगर है.

माना निर्मम है जीवन-पथ, साथ अगर तुम, तो क्या डर है.

मैं वह कृति हूँ जिसमें लिक्खा, खुद तुमने अक्षर-अक्षर है.

काश! कि तुमसे सीखे कोई, जीवन जीना एक हुनर है.

3.

हजारों ज़ख्म सीने में दबा के लगाता है वो पूरे दिन ठहाके.

छुपा है दर्द कितना उसके दिल में, कोई देखे ज़रा नजदीक जा के.

तमना थी उसे देखूँगा जी-भर, घर तक आता खुद चल कर है. मगर वो छुप गया चेहरा दिखा के.

> सिफ़र हूँ मैं तुम्हारे बिन ओ साथी! मुझे तुम देख लो खुद से घटा के.

किसी भी मोड़ पर धोखा न दुँगा, कभी भी देख लेना आज़मा के.

मैं सूरज ओढ़कर पहुँचा यहाँ तक, कभी ठहरा नहीं हूँ छाँव पा के.

ये मेरे लफ़्ज़ हैं रहता हूँ इनमें, बहुत काम आएंगे रख लो बचा के. 4.

लगाए काम की उम्मीद बच्चे, सड़क पर हैं सवेरे से इकट्टे.

महज़ दो जून की रोटी के बदले, बिके श्रम-देवता सस्ते से सस्ते.

मरे भूखे बेचारे अन्नदाता, मज़े में थे मगर सारे निकम्मे.

कभी हारे न अपनी मुफ़लिसी से, लड़े हम अंत तक होकर निहत्थे.

हुआ दस साल आगे उम्र से मैं, कोई जब बोला-दादा जी नमस्ते.

नया इक शौक़ राजा को लगा है, उतारे घूमता है कपड़े-लत्ते.

कहाँ कैसे दिखें बोलें चलें हम, सिखाते अब हमें बच्चों के बच्चे. 5.

सिर्फ बाज़ीगरी, सिर्फ कारीगरी, लोग करते रहे अक्ल से शायरी.

भूख के प्रश्न दिल में ठहरते कहाँ, सोच थी लक्ज़री शब्द थे लक्ज़री.

इक पुरस्कार के वास्ते उम्र-भर, हम सियासत की करते रहे चाकरी.

वक़्त की साज़िशों से लड़े ही नहीं, सिर्फ लिखते रहे वक़्त की डायरी.

शब्द आकर मिले मुझको यूँ भी कभी, हाथ लग जाए जैसे कोई लॉटरी.

पाँव हर वक़्त रखिए सँभल कर यहाँ, ये ज़मीं मेरी गज़लों की है खुरदरी.

चार गजलें रिसाले में क्या छप गयीं, खुद को गज़लों का कहने लगे जौहरी.

-जय चक्रवर्ती

### मुकेश कुमार सिन्हा

बेगूसराय, बिहार में जन्मे और वर्तमान में दिल्ली में रह रहे मुकेश कुमार सिन्हा प्रसिद्ध कवि हैं। एक कथा संग्रह "लाल फ्रॉक वाली लड़की" तथा दो कविता संग्रह "हमिंग बर्ड", "हैं ना" प्रकाशित। सात कविता संकलनों का सम्पादन। कई साहित्यिक संस्थाओं से पुरस्कृत/ सम्मानित।



ईमेल - mukeshsaheb@gmail.com

## कविता

-मुकेश कुमार सिन्हा

### विस्थापन

वे लड़के नहीं होते भागे हुए भगाए गए ज़रूर कहा जा सकता है उन्हें जो घर छोड़ने के अंतिम पलों तक सुबकते हैं, माँ का पल्लू पकड़ कर "नहीं जाना अम्मा मत भेजो न परदेश"

विस्थापन के इस अवश्यम्भावी दौर में रूमानियत को दगा देते हुए निहारते हैं मैया को ओसरा को रिक्शे से जाते हुए गर्दन अंत तक टेढ़ी कर जैसे विदा होते समय करती है बेटियाँ जैसे सीमा पर जा रहा सैनिक समेटे रहता है वे चिट्ठियाँ जिसमें 'महबूबा इन मेकिंग' ने भेजी थी फ़िल्मी शायरी ट्रेन में बैठते ही लेते हैं ज़ोर की उसाँस यूँ समझाते हैं ख़ुद को कि अब रखना होगा अपना ध्यान फिर बर्थ के नीचे बेडिंग सरकाते हुए थम्स अप की बोतल से पानी का लेते हैं घूँट पाँच रुपये में चाय का एक कप खरीद कर सुड़कते हैं जैसे यकायक हो गये हों वयस्क करते हैं राजनीति पर भी बात खेल की दुनिया के अलावा

पर घंटे भर में डब्बे के बाथरूम में जाकर फफक पड़ते हैं बुदबुदाते हैं एक लड़की का नाम मारते हैं मुक्का दरवाज़े पर ये अकेले लड़के मैया-बाबा से दूर, रात को सोते हैं कमरे का बल्ब ऑन करके अँधेरी पलकों में नहीं देखना चाहते वो सपना जो अम्मा-बाबा ने पकड़ाया था पोटली में बाँध के

आखिर करें भी तो क्या महानगर की सड़कें बता देती है औकात घर से बहुत दूर भटकते लड़कों को जो राजपथ की घास पर चित लेटे देख रहे हैं डूबते सूरज की लालिमा

किताबी बौद्धिकता छाँटते हुए बेल्ट से दबाये अहमियत की बुशर्ट स को श कहते देते हैं परिचय करते हैं नाकाम कोशिश दुनिया जीतने की हर दिन कहती है दुनिया 'आई विल कॉल यू लेटर' या 'सेलेक्ट कर लिया है किसी और को'

पानी की किल्लत में जैसे तैसे शर्ट बनियान धोते हुए भीगे हाथों से पोछ लेते हैं आँसुओं का नमक याद आती है घर की बादशाहत जब फेंक देते थे आलना पर शर्ट

ये लड़के मोबाइल पर चहकते हुए बताते हैं सड़कों की लंबाई मेट्रों की सफाई प्रधानमंत्री का स्वच्छता अभियान कनॉट प्लेस के लहराते झंडे का बखान नहीं बता पाते कि नहीं मिल पाई अब तक नौकरी ऑमलेट बनाते हुए जल गई कोहनी

दिन बदलता है
मिलती है नौकरी
होते हैं पर्स में पैसे
पर बाबा के सपनों से बेहद कम
नहीं मिलता वो प्यार और दुलार
पर ये जिद्दी लड़के
घर से ताज़िंदगी दूर रहकर
जीते हैं घर-गाँव-चौक-डगर को ही हर पल
लड़कपन को तह कर तहों में दबाये
पुरुषार्थ के लिए तैयार यकबयक
अचानक बड़े हो जाने की करते हैं कोशिश
और अकेलेपन में सुबक उठते हैं

लड़कियाँ ही नहीं कुछ लड़के भी भेजे जाते हैं घर से बहुत दूर जीने सिर्फ अपनों के लिए अपनों के सपनों के लिए।

-मुकेश कुमार सिन्हा

#### अभिषेक कश्यप

कमलाकांत कररिया गांव, गोपालगंज (बिहार) में जन्मे और 'धनबाद आर्ट फेयर' के संस्थापक व निदेशक अभिषेक कश्यप, चर्चित कथाकार, कला-लेखक और संस्कृतिकर्मी हैं। एक उपन्यास, तीन कहानी संग्रह के अलावा कला, आलोचना, संवाद और संस्मरण सहित १० पुस्तकें प्रकाशित। कई पुस्तकों का संपादन। 'ऑलमोस्ट फेमस' युवा लेखकों में चयनित व सम्मानित।

ईमेल - dhanbadartfair@gmail.com



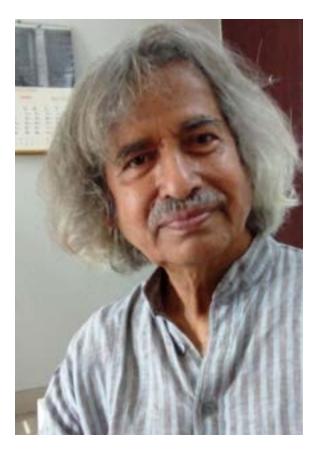
# जोगेन चौधरी की कला न्यूनतम में अधिकतम

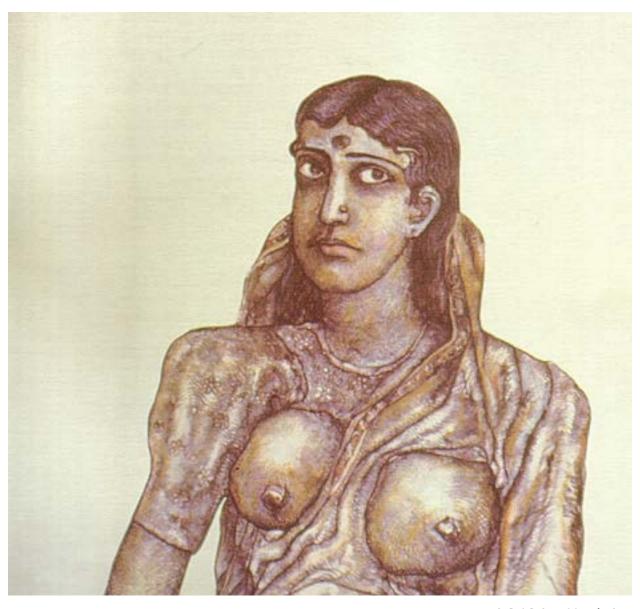
-अभिषेक कश्यप

"जोगेन चौधरी के चित्रों, उनकी कला की विशेषताओं पर बहुत कुछ लिखा, कहा गया है। उनके कोमल उंगलियों से रचे गए रेखांकनों/चित्रों के सभी मुरीद हैं। लेकिन मेरी नजर में उनकी कला की सबसे बड़ी खासियत है-न्यूनतम में अधिकतम की अभिव्यक्ति'..."

"जोगेन चौधरी उन समकालीन शीर्षस्थ कलाकारों में से हैं जिन्होंने लंबे आत्मसंघर्ष, धैर्य और परिश्रम से अपने लिए एक अनोखी चित्रभाषा गढ़ी और उसे निरंतर परिष्कृत-परिमार्जित किया। कम ही चित्रकार होंगे. जो आकृतिमूलक चित्रों में देसज आधुनिकता को अपनी नितांत नयी कला भाषा से इस ऊंचाई तक ले गए। वह भी अपने विशिष्ट व्यैक्तिक बोध के साथ। अखंडित रेखाओं के साथ रंगों की न्यूनता और सधी हुई वैचारिक दृष्टि जोगेन का अपना वैशिष्ट्य है, जिसके जरिए अपने चित्रों में वे अर्थों की बहुलता और बहुवचनात्मकता पैदा करते हैं।

गौरतलब है कि जोगेन ने घटनाओं-





नटी विनोदिनी / जोगेन चौधरी

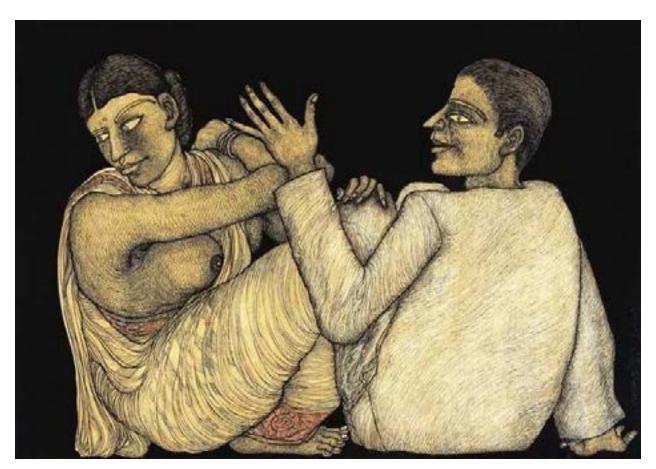
दुर्घटनाओं, हलचलों से ऊभ-चूभ जिस त्रासद समय में अपनी कला यात्रा शुरू की, वहां प्रचलित धारा में बह जाने की संभावना (खतरा) प्रबल थी। विस्थापन का दंश, पूर्वी बंगाल के अपने सहज समृद्ध प्राकृतिक जीवन से विछोह, नए उथल-पुथल भरे परिवेश, अभाव और जिंदगी की घोर अनिश्चितताओं के बीच कोलकाता के आर्ट कॉलेज से पढ़ाई पूरी कर निकला कोई युवा आसानी से बंगाल घराने (स्कूल) की धारा में बह सकता था या फिर पश्चिमी कला के सर्वव्यापी प्रभाव के आगे घुटने टेक सकता था। लेकिन इन सबसे परे तमाम अभावों के बीच जोगेन ने लंबे आत्मसंघर्ष का कठिन रास्ता चुना। ("पढ़ते और लगातार चिंतन-मनन करते हुए मैंने जाना कि क्या करना चाहिए। अध्ययन-चिंतन से मैंने सीखा कि हमें किसी की नकल नहीं करनी, खुद को दुहराना नहीं, न ही स्टीकर बनाना है।")



गणेश / जोगेन चौधरी

जोगेन किसी चित्र विशेष में तात्कालिक घटनाओं के समानांतर संपूर्ण जीवनानुभवों को चित्रित करने की क्षमता रखने वाले कलाकार हैं। वे उस राजनैतिक-सामाजिक परिवेश से हमारा परिचय कराते हैं, जो चिरपरिचित होने के बावजूद हमारे लिए अब तक 'अदेखा' था। आकृतियों के जरिए उनके चित्रों में स्वतः ही ऐसे सघन भाव प्रविष्ट हो जाते हैं कि हमारे परिचित दृश्यों में नए भावबोध की सृष्टि होती है। जोगेन का व्यंग्य-बोध भी अनूठा है। उनमें एक अजीब-सी तटस्थता है। मसलन जोगेन के एक चित्र में भक्त नेता के पैर छू रहा है। जोगेन ने नेता का झुका हुआ चेहरा ऐसा चित्रित किया है मानो नेता ही अपने भक्त के पैरों पर झुका है। ऐसा करते

हुए वे नेता की खिल्ली नहीं उड़ा रहे बल्कि एक व्यक्ति के रूप में नेता की मानवीय कमजोरी व दैन्य को चित्रित करते हुए इशारा करते हैं कि दरअसल नेता और भक्त में कोई अंतर नहीं। दोनों बराबर हैं। अवसरवादी राजनीति में कभी भी दोनों की जगह बदल सकती है। दोनों समान रूप से असुरक्षित हैं और असुरक्षा का यह भाव उन्हें दयनीय बना रहा है। गणेश की विरूपित छवि को चित्रित करते हुए भी वे इसी कलात्मक तटस्थता का निर्वाह करते दिखते हैं। व्यापारी वर्ग गणेश को अपना अराध्य मानता है। गणेश की छवि के साथ वह 'शुभ लाभ' अंकित करता है। लेकिन वहां 'शुभ' का विलोप होता चला जाता है और 'लाभ' तेजी से लालच, अभीप्सा, नैतिक और



कपल / जोगेन चौधरी

चारित्रिक पतन में तब्दील होने लगता है। जोगेन अपने अद्वितीय सौंदर्यबोध और तटस्थ दृष्टि से गणेश की विरुपित छवि को इस वर्ग के 'रुपक' के तौर पर प्रस्तुत करते हैं लेकिन किसी वर्ग विशेष के प्रति घृणा कतई नहीं उपजाते। जोगेन देवता की छवि का मानवीय छवि में रूपांतरण करते हुए लालच, अभीप्सा, अनैतिक व्यवहार जैसी मानवीय कमजोरियों की मुख़ालफ़त तो करते हैं लेकिन यहां मनुष्य के प्रति गहरी सहानुभूति और आस्था का बोध भी इतना सहज, सूक्ष्म (विचित्र भी) है कि हम हैरत में पड जाते हैं।

जोगेन की शैली के इस नयेपन और विचित्रता को 1981 में अपनी एक चित्र-प्रदर्शनी के कैटलॉग में उनके ही इस उद्धरण से बहुत हद तक समझा जा सकता है- ''मेरे चित्र वे सब चीजें दिखाते हैं जो मैं पसंद करता हूं-जिन चीजों को मैं प्यार करता हूं और जिनसे नफ़रत करता हूं। मैंने इन चित्रों को जिस शैली और रूपाकारों में पेंट किया है वे देश के लोगों और यहां के जीवन के एक खास तरह के स्वभाव और स्थिति में ही जन्म ले सकते थे। "

मेरे खयाल से यहां 'नफरत' का आशय संभवतः 'मानवीय कमजोरियों' की उस मुख़ालफ़त से ही है, ऊपर मैंने जिसकी चर्चा की।

जोगेन स्त्रियों को एक खास भावनात्मक प्रज्ञा के साथ चित्रित करते हैं। 'नटी विनोदिनी' हो या फिर 'वीमेन', 'कपल', 'मैन एंड वीमेन' श्रृंखला के चित्र, अपने अकेलेपन, दुःख-दर्द और करूणा के बीच जोगेन की स्त्रियाँ अपने ही भीतर कहीं गहरे उतरती जान पड़ती हैं। पुरुषों के साथ



चांदनी रात में चीता / जोगेन चौधरी

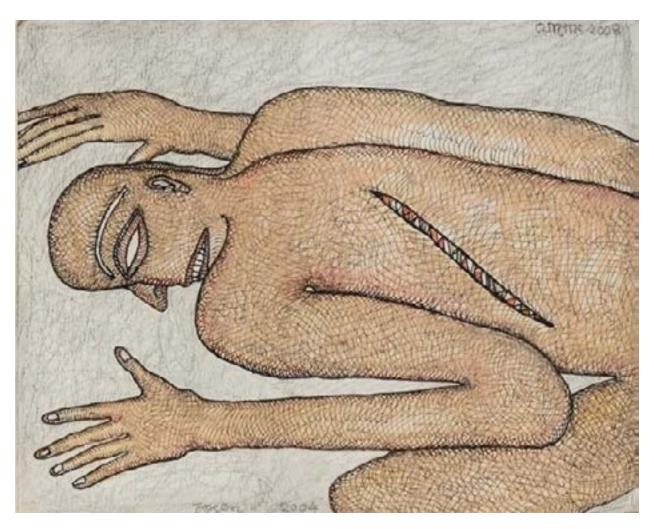
भी वे उतनी ही अकेली और अंतर्मुखी हैं, जितना अपने अकेलेपन में। कई जगह वे पुरुषों से मुंह फेरे हुए हैं तो कई जगह पुरुषों को वे इस कौतुहल से देखती हैं मानो पुरुष की देह का विलोप हो गया हो और वे किसी पारदर्शी वस्तु से मुख़ातिब हों।

जोगेन खींद्रनाथ टैगोर के चित्रों के बारे में कहते हैं-''रूप में अरूप का आगमन, सीमा में असीम की उपस्थिति।" यही बात जोगेन के कई चित्रों ('नटी विनोदिनी', 'द इंटेलेक्चुअल', 'गणेश', 'सुंदरी', 'फेस इन एगोनी', 'वुंडेड', 'चांदनी रात में चीता') के बारे में भी निःसंकोच कही जा सकती है, जहां हम मूर्त में अमूर्त को घटित होते हुए देखते हैं। अमूर्तन का गहरा बोध अनायास ही उनके चित्रों में उतर आता है।

जोगेन चौधरी के चित्रों, उनकी कला की

विशेषताओं पर बहुत कुछ लिखा, कहा गया है। उनके कोमल उंगलियों से रचे गए रेखांकनों/ चित्रों के सभी मुरीद हैं। लेकिन मेरी नज़र में उनकी कला की सबसे बड़ी खासियत है- "न्यूनतम में अधिकतम की अभिव्यक्ति।" बहुत कम रंगों का इस्तेमाल कर वे अपनी कला में अर्थों की ऐसी बहुलता पैदा करते हैं, जो चिकत करती है। इससे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष तौर पर यह भी प्रमाणित होता है कि ज्यादा बोलने से आर्ट पैदा नहीं होता बल्कि कई बार अवरोध ही बन जाता है। और यह बात चित्रकला ही नहीं; साहित्य, संगीत, सिनेमा और अन्य रूपंकर और प्रदर्शनकारी कलाओं पर भी लागू होता है।

कलाकार का चिंतन, उसकी कला-दृष्टि ही महत्वपूर्ण है न कि माध्यम ! चाहें रंग



फेस इन एगोनी / जोगेन चौधरी

हों, मिट्टी, कपड़ा, कागज हो, वाद्ययंत्र हों या फिर प्रदर्शनकारी कलाओं में कलाकार की अपनी ही देह-ये सभी माध्यम ही तो हैं। माध्यम कभी श्रम, चिंतन और दृष्टि का विकल्प नहीं बन सकते। संभवतः इस समझ ने ही बतौर कलाकार जोगेन चौधरी की कला को इस ऊंचाई तक पहुंचाया है।

न्यूनतम में अधिकतम की अभिव्यक्ति जोगेन दा की कला के समानांतर उनके व्यक्तित्व का भी अभिन्न हिस्सा है। प्रतिष्ठा, शोहरत और सेलिब्रिटी स्टेट्स हासिल करने के बाद जहाँ कई बड़े कलाकार अपनी ही छवि के बंदी बन जाते हैं, वहीं उन्होंने इस घेरे को तोड़ कर नए विचारों और सामाजिक-सांस्कृतिक

अभियानों से निरंतर खुद को जोड़े रखा है।

यही नहीं, एक व्यक्ति के रूप में पारदर्शी व्यवहार, बिना किसी लगाव-बुझाव के लोगों से खुल कर मिलना-जुलना, सबके प्रति सहयोग का भाव रखना, लोगों को ध्यान से सुनना, नित नया करने को आतुर रहना- ये कुछ ऐसे गुण हैं, जिनकी वजह से कला जगत से इतर भी उनसे जुड़े और उन्हें जानने वाले लोगों की संख्या बहुत बड़ी है।

#### -अभिषेक कश्यप

# चित्र और चित्रकार



चित्रकार : जया पाठक श्रीनिवासन टाइ्टल: सोलुमेट

माध्यम : ऐक्रेलिक ऑन कैनवास साइज : 30/40, 2022